

पांच बरस लम्बी सड़क



राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६



पांच बरस लम्बी सड़क

अनुवादिका
शान्ता

मूल्य चार रुपये पचास पैसे

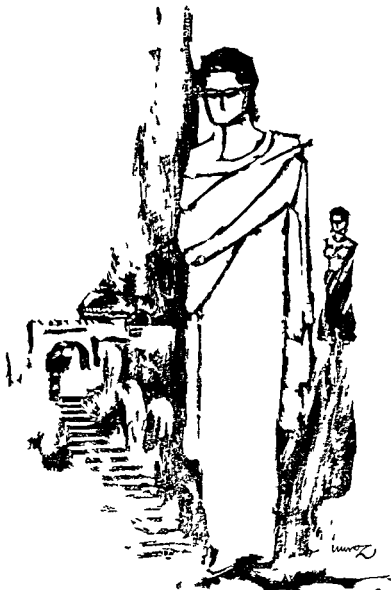
© अमृता प्रीतम, १९६६

पहला संस्करण १९६६

क्रम

यात्री ६

पाच वरस लम्बी सड़क ६६



यात्री



औरत दुनिया की सबसे बड़ी स्मगलर है। मर्द कुछ भी करे, सिर्फ गाजे और अफीम जैसी चीजे ही स्मगल कर सकता है। ज्यादा से ज्यादा सोना स्मगल कर सकता है, या सरकारी भेद जैसी कोई चीज, वस इससे ज्यादा कुछ नहीं। पर औरत इन्सान के समूचे अस्तित्व को स्मगल कर सकती है। जब तक स्मगलिंग का माल छुपा सकती है, कोख में छुपाए रखती है, जब नहीं छुपा सकती, बताने देती है, दिखा देती है—और वह भी किसी शर्मिन्दगी के साथ नहीं, बडे मान के साथ—स्मगलिंग के कसब का हक कहकर। हक कहकर भी नहीं एहसान कहकर।—इन्सान पर इन्सान के बश को चलाए रखने का एहसान कहकर।

मेरी मा ने मेरे बाप पर यही एहसान करने के लिए भगवान् से एक बेटा मागा था—पहले हकीमों की दवाइयों से मागती थी, फिर फकीरों की जड़ी-बूटियों से, फिर अडोसन-पडोसन के बताने हुए जादू-टोने से, फिर करामाती कहे जाते पीरो-फकीरो की कबरो से, और फिर शिवजी के इस मन्दिर में आकर शिवलिंग से—और आखिर माग-मागकर उसने भगवान् को इतना तग कर दिया कि भगवान् को उसे बेटा देना ही पड़ा।

सोचता हूँ, भगवान् पूरा बनिया है। मा ने भगवान् से भी एक सौदा कर लिया था—तू मुझे एक बेटा दे दे मैं उसे तेरे इसी मंदिर में चढ़ा जाऊँगी तेरी सेवा में अर्पित कर जाऊँगी

अजीब सौदा है—मा ने भगवान् पर भी एहसान कर दिया दत्त तरी सेवा के लिए मैं क्या दे रही हूँ। लाग मुट्ठी भर मक्की का आटा दत्त हैं या गुड चावल और नारियल चढ़ा देते हैं या ज्यादा से ज्यादा किसी चूल्हारे और बावली पर सगमरमर गड़ जात है या कलश पर साने का पतरा पर मैंने जाता-जागता एक बच्चा तेरी मूर्ति के आगे रखा है और उधर मेरी मा ने मेरे बाप पर भी एहसान कर दिया—कितनी मुसीबत भेलनी पड़ी पर आखिर मैंने तेरे कुल का नाम रख लिया तेरा बग खत्म होन नहीं दिया, और चाह तरे इस बेटे का तर खेतो में जाकर हल नहीं जोतना है, बुढ़ापे में तेरी लाठी भी नहीं पकड़नी है पर तू कभी कभी उसे आखो से देखकर कलेजा ठंडा कर सकता है—दुनियादार बेटो को सिर्फ देखा जाता है पर साधु बेटे के ता दगन किए जात हैं।

मा अक्सर यहा दगन करने आती है बाप सिर्फ सज्जाति वाले ग्नि या किमी पक्क पर। गायद इसलिये कि बहुत मुसीबतें मा ने भेली थी और उमी का महत्व जानने के लिए उसे एक प्रत्यक्ष सबूत की जरूरत पड़नी है और मैं बास बरसा का प्रत्यक्ष सबूत हूँ।

मुझे माद नहीं—चालीसा नहाने के बाद जब मेरी मा मुझे एक गरए कपड़े में लपेटकर इस मंदिर में चान आई थी तो गिवमूर्ति के ठंडे परा परपडा मैं राया या या नहीं। (सुना है मा ने अपनी मानना के मुनाबिक मुझे पना हान ही गेरए कपड़े में लपेट दिया था।)

मन्दिर के मुख्य सत किरपाभागर जान मेरे माये का मूर्ति के परा में लपटाकर मुझे फिर मा का भोला में डाल दिया था—“यह बालक

भ्राज से शिव का पुत्र है, पार्वती इसकी मा, और तू इसकी घाय। एक वरस के लिए तुझे दूध पिलाने की सेवा सौपते हैं। इसकी पहली वर्षगांठ पर यह बालक हमें लौटा देना।”

सो एक वरस के लिए मैं उधार सौपा गया था। पता नहीं, इस एक वरस में मैंने मा को मा कहकर पुकारा था या नहीं, शायद नहीं—क्योंकि मेरे होठ इस शब्द से परिचित नहीं लगते।

अनुमान लगाता हूँ कि अपनी पहली वर्षगांठ को जब गेरुआ चोले में घुटनो-घुटनो चलते, मैंने मन्दिर की मूर्ति के पैरों में पड़े हुए फूलों के पास पहुँचकर, किसी फूल को उठाकर खाने के लिए मुँह में डाला होगा, और मेरे गले में फूल के स्वाद को कबूल न किया होगा—तो मैं जरूर रोया होगा। (मन्दिर का बूढ़ा सेवादार साईं भगतराम बताता है कि फूलों की पत्तियाँ मेरे तालू से चिपक गई थी, और मेरा साँस रुक गया था। उसने मेरे मुँह में उगली डालकर वे पत्तियाँ निकाली थी, और फिर मुझे बहलाने के लिए महत जी ने खुद एक कटोरी में दूध और बताना डालकर मुझे मूर्ति का प्रसाद चखाया था।)

शायद कुछ दिन दुकुर-दुकुर सबके मुँह की तरफ देखा होगा—साईं भगतराम के मुँह की तरफ, गोविन्द साधु के मुँह की तरफ, महत किरपासागर के मुँह की तरफ, शिव की मूर्ति के मुँह की तरफ, पार्वती की मूर्ति के मुँह की तरफ और मन्दिर में आकर माथा टेकने वाले भक्तों के मुँह की तरफ—कुछ याद नहीं। ये सारे मुँह चिरकाल से परिचित लगते हैं।

मन्दिर में एक गुफा है। कहते हैं, यह गुफा यहाँ कागड़ा घाटी में से निकलकर कैलास पर्वत पर पहुँचती है। पर अब कोई इस गुफा में से गुजरा नहीं। जाने वाले जब जाते थे, इस बात को सदियाँ गुजर गई हैं। यह गुफा कई सौ मील लम्बी है, यह सिर्फ एक कथा है। कथा का डवर का सिरा सामने दिखता है—गुफा का मुँह। डवर का सिरा

कोई नहीं जानता। पता है—मैं भी नहीं जान सकूँगा, पर लगता है, जमे मैं इस सड़क में लम्बी गुफा में कुछ भी न रोज चलता हूँ। पहुँचता वहीं नहीं सिर्फ चलता हूँ। अघेरा इसके गोल मुह पर भी पुता हुआ है—और दूर अंदर भी।

मा शब्द को सिर्फ इस कहानी को चलाने के लिए बरत रहा हूँ वैसे इस शब्द से मेरा कोई वास्ता नहीं। मंदिर में बहुत सी औरतें आती हैं वह भी आती है। मन से उसका वह औरत ही कह सकता हूँ मा नहीं। यह शब्द एक मजाक लगता है—मेरे साथ तो लगता ही है उसके साथ भी। बिल्कुल उसी तरह जैसे बेचारी पावती के साथ।

कई बार रात के अघेरे में मैं अपनी कोठरी से निकलकर मन्दिर के उस हिस्से में चला जाता हूँ, जहाँ गिब और पावती की आत्मक मूर्तियाँ हैं। वह दोनों मुझे बड़े स्थिर और आराधना में तीन एक बूढ़े किसान और एक अवेड औरत की तरह खड़े लगते हैं—भगवान् में एक बटे की मुराद मागत हुए। बिल्कुल उसी तरह जिस तरह मरी मा और मरा बाप किसी दिन इसा तरह ऐसे ही खड़े होकर भगवान् से प्रार्थना करते रहेंगे।

मैं दोनों मूर्तियों के सामने खड़ा हो जाता हूँ जस हस रहा होता हूँ—तुम्हें एक बटे की बहत कामना है? अच्छा, मैं अपने आप का दान देता हूँ।

मूर्तियाँ दो मिथारिया की तरह लगती हैं और अपना आप—मिथा की वस्तु।

नहीं मैं मिथा की वस्तु भी नहीं, सिर्फ मिथा का एक पाय हूँ। वस्तु में एक रंग, एक स्वाद, एक महक शामिल होती है। और सबसे ज्यादा एक सन्तुष्टि शामिल होती है मुझमें वह कुछ भी नहीं। मैं सिर्फ

एक पात्र हू—वस्तु को ढोने वाला । वस्तु एक तसल्ली है—जो मा नाम की एक औरत को मिली है, और वाप नाम के एक मर्द को मिली है, या शिव-पार्वती को मिली है, जिनकी मूर्तियों वाले इस मन्दिर की शोभा बढ गई है—कि इस मन्दिर से वेदों की मुराद मिलती है ।

मेरा ख्याल है—महंत किरपासागर जी सचमुच दूरन्देश है । उन्होंने मेरे जन्म के समय ही मेरे मन की उस अवस्था का अनुमान लगा लिया था, जो कुछ सोच और समझ आने पर मेरे अन्दर पैदा हो जानी थी । इसलिए उन्होंने एक सक्रान्ति वाले दिन मेरा नाम रखा था—किरपापात्र ।

किरपापात्र या भिक्षापात्र एक ही बात है । एक तरह से हम सब भिक्षा पर ही पलते हैं—सिर्फ मैं नहीं, साईं भगतराम भी, गोविन्द साधु भी । महंत किरपासागर भी । हाथ फैलाकर कोई भी किसी से कुछ नहीं मागता, सब पैरों के जोर से मागते हैं—कभी अपने पैरों के जोर से, और कभी उनसे बहुत तगड़े शिव-पार्वती-के पैरों के जोर से—भक्तजन जो कुछ देते हैं, शिव-पार्वती के पैरों पर रख देते हैं, कई महंत जी के पैरों पर भी रख देते हैं, कोई गोविन्द साधु के पैरों पर भी रख देता है, और कोई-कोई साईं भगतराम के पैरों पर भी—मेरे पैर भी पैरों में शामिल हो रहे हैं—हम सब जैसे हाथों का काम पैरों से ले हैं...

पर भिक्षापात्र होने का ख्याल सिर्फ मुझे आता है । पता नहीं । शिव-पार्वती तो खैर बोल नहीं सकते, महंत जी के मुह से भी ऐसी बातें मैंने कभी नहीं सुनी । गोविन्द साधु गूंगा हैं, उसके कुछ बोलने का ढाल ही नहीं उठता, पर उसके मुह से भी नहीं लगता कि वह किसी ज को भीख समझता हो—बल्कि वादामो की ठडवाई अगर कभी उसके हों नहीं आती तो वह धूरकर सबकी तरफ देखता है । साईं भगत-

राम तो बिल्कुल अलबेला है, वह बाजरे की सूखी रोटी भी उसी स्वाद में चबा जाता है, जिम तरह गिरी की पजीरा। सिफ मरे गले में कुछ अटका हुआ है—घौर हर प्रास के साथ चुम सा जाता है।

मेरे के नाम पर सिफ चार कोठरिया है—एक महत जी की एक मेरी, एक गोविंद साधु और साइ भगनराम की और एक आने जाने वाले माधुर्षों के लिए। इन कोठरियों की भांड दुहार सा भगनराम के जिम्मे है। मन्दिर इन कोठरियों से बिल्कुल अलग है—एक पयरीली पगडंडी का साथकर पहाड़ के एक बक्ष में बना हुआ। एक छाटी सी पानी की नहर मन्दिर के पैरों में बहती है। इस नहर के साथ चौतरे की और पयरीली पगडंडी की सफाई भी धक्कर साइ भगनराम ही करता है। (बस यह गोविंद साधु के जिम्मे है) मन्दिर के पक्ष को घोना और पाछना मरे जिम्मे है—मुमसे पहले सायन महत जी के अपने जिम्मे था—घौर लगता है इस काम में हम सब भिक्षा के शत्रु को अपने में भांड दत है। सबसे मेरा मनलब है—मारे, मिवा मरे।

मन्दिर पत्थरा या इटो से बनाया हुआ नहीं एक बहुत बड़ी चट्टान को बीच में से खादकर बनाया हुआ है। चट्टान का ऊपर का हिस्सा छत की तरह है, नीचे का हिस्सा फस की तरह। इसके अन्दर की मूर्तिया भी वही बाहर से लाकर रखी हुई नहीं, बीच के पयरीले हिस्से का ही तराशकर बनाई हुई हैं। और बाहर से जो नदी गुजरती है बट पहाड़ के पिछले हिस्से में से ऐसे आती है कि उसका कुछ पाना चट्टान के ऊपर के हिस्से से टपककर बूद बूदकर मूर्तिया के गलार पर गिरता रहता है। मूर्तिया रोज धुनी हुई जाती हैं—सगानार पड़ते पानी में मोलन की एक पतली सी परत उनपर जम जाती है जिस राज एक माटे कपड़े से मनकर उतारना होता है। और सगता है—भिक्षा का शत्रु भी बूद-बूद गिरत पानी की तरह दिन रात मेरे जिस्म पर पड़ता रहता है। मैं

किसी भी ख्याल के मोटे कपड़े से मलकर उसे उतारू, वह तब भी एक सीलन की पतली परत की तरह मेरे ऊपर जमा रहता है। रोज जम जाता है।

महत किरपासागर जी से निजी तौर पर मुझे कोई शिकवा नहीं— उन्होंने अपने लिए आए चढावे में से हिस्सा निकालकर मुझे पाला है, पढाया है—सिर्फ शिकवा है तो उनके सागर होने से, और अपने पात्र होने से।

शिकवा भी नहीं, नफरत है।

और यही नफरत उस मा नाम की औरत से है जिसने इस पात्र को अस्तित्व दिया है। यह नफरत इस हद तक है कि वह जब भी मन्दिर के दर्शन के लिए आती है, मैं किसी वहाने मन्दिर में बाहर चला जाता हूँ। कभी वह मेरी कोठरी की दहलीज रोक ले, और अपने पल्लू में बधी हुई अखरोट की गिरिया जवरन मेरे मुह में डाल दे, तो उसकी पीठ मुडते ही मैं मुह में से वे गिरिया थूक देता हूँ।

बाप नाम के मर्द को जब देखता हूँ—वह अपने वश की रखवाली करता हुआ एक प्रेत-सा लगता है।

किरपासागर जी के गाल मुझे दो लाल पके हुए फोडो की तरह लगते हैं, जिनपर एकदम पुल्टिस बाघने का ख्याल आता है ..

मा—धीरे-धीरे चलती हुई जब एकदम सामने आ जाती है—वह मुझे पजो के बल चलती हुई बिल्कुल एक बिल्ली लगती है, जो अभी एक घूँहे की गर्दन दबोच लेगी ...

बाप—दुबला-पतला-सा और सिर को कन्धों के ऊपर एक बोझ-सा डालकर चलता हुआ मुझे खेतों में गाडे हुए 'डरने' की तरह लगता है .. और मैं चिडियो-कौबो की तरह उससे डर जाता हूँ ..

एक साधारण आख से शायद यह सब कुछ नहीं दिख सकता, पर मुझे

पना है, मेरा आँखों में नफरत की डोरिया पड़ी हुई है

गोविंद साधु जब बूटी रगड़कर पीता है उसकी आँखा में भी लाल डारिया पड़ जाती हैं और वह लाल डारियो वाला आँखा स जब मुझे देखता है—मैं उस बीस बरस का एक जवान आदमी नहीं जवान औरत नजर आता हूँ

तीन चार सात हो गए, गोविंद साधु ने एक दिन अपनी तोरी जसी लटवनी टांगा पर बादाम रागन की मालिश करते हुए जबरदस्ती मेरी बांह पकड़ ली थी और वह मेरी पीठ पर और टांगा पर बादाम रागन की मालिश करने लगा था। मुझे बिल्की कुत्ता या कोई भी जानवर अच्छा नहीं लगता, उसके लम्बे लम्बे हाथ मुझे कुत्त के पाँचों की तरह लगे थे मैंने जब हटने के लिए जोर लगाया था तो उसने अपनी पूरी ताकत से मुझे एक चीड़ पत्थर पर गिराकर । मैं बड़े जार से चिल्लाया था—इतने जार से—कि अंत में किरपासागर ने यह आवाज सुनकर बहा पड़ चुके थे । उन्होंने पास ही पड़ हुए बूटी रगड़ने वाले डंडे से गोविंद साधु का ऐसे पीट डाला था —जस वह गोविंद साधु को भी बूटी या तरह ही रगड़ देंगे । उस दिन के बाद गोविंद साधु ने मुझसे कुछ नहीं कहा, बल्कि मैं दापहर के समय जिस पड़ के नीचे बैठकर पत्ता हूँ, वह वन से घूमकर दूर जा बैठता है । पर वह मैं अब भी देख पाता हूँ—वह जिस दिन बूटी रगड़कर पी ले, और उसकी आँखों में लाल डोरिया पड़ जाए वह उनकी कारा में से मुझे आत-जात ऐसे देखता है —जस मैं उसको बीस बरस की एक जवान औरत दिखता हूँ

पर उससे मुझे नफरत नहीं । वह सुनती के भार हुए कुत्तों की तरह लगता है । कुत्त से कोई रास्ता बाँधकर निकल सकता है तो उस एक आँखों में हा सकती है पर उसके खून में नफरत नहीं खोलती ।

इस तरह साइ भगनराम एक खस्सी (बधिया) जसा लगता है, जिससे

किसी गाय को कोई खतरा नहीं। इसलिए उससे भी कोई नफरत नहीं होती।

नफरत के पात्र सिर्फ वे हैं जिन्होंने अपनी भोलियों में दान-पुण्य भरा हुआ है—और या भिक्षापात्र—मैं स्वयं।

दो

नफरत...नफरत...नफरत...चिड़ियों का एक झुण्ड अभी चहकता गुजरा है। शायद उधर की दीवार के पास साईं भगतराम ने दाल-चावल सूखने के लिए डाल रखे थे, चिड़ियों ने उसे चुगगा समझ लिया था, और साईं ने या गोविन्द साधु ने अपना घुघरू वाला डडा खडका दिया था कुछ आवाज़-सी आई थी, और फिर चिड़ियों का झुण्ड मेरे ऊपर से चहकता हुआ गुजर गया। सब चिड़िया जैसे चहक रही थी—नफरत...नफरत...नफरत...

यह शब्द शायद बहुत बड़ा है—चिड़ियों की चोच में पूरा नहीं आ रहा था, पर वे इसी शब्द को बार-बार दुहरा रही थी—जितना भी उनकी चोच में पकड़ा जा रहा था...

ढेरे में परसों से मूसलनाथ का डडा फिर खडक रहा है। वह वरस में एक-आध फेरा जरूर लगाता है। फिर उन दिनों में रोज़ भाग का दौर चलता है। बहुत छोटा था, जब वह मुझे भोली में बिठाकर—नहीं, बिठाकर नहीं, भोली में दबोचकर कहता था, “तुझे नाथ जोगियों के नाम आते हैं ? जो तू बिना भूले सारे नाम सुना दे तो मैं तुझे इलायची और मिश्री दूंगा...” इलायची और मिश्री के लिए नहीं, पर उसकी भोली में से छूटने के लिए मैं जल्दी से जोगियों के नाम दुहरा देता था—आदिनाथ,

महेन्द्रनाथ, उदयनाथ, सतोपनाथ, कथडनाथ सत्यनाथ अचम्भनाथ
चौरंगीनाथ और गोरखनाथ । वह भोले म से प्लायची मिथी त्रिवालने
लगतता तो मैं उसकी बाहो से छिन्ककर परे जा पड़ा हो जाता था और
जोर स कहता था—और तेरा नाम मूसलनाथ । मुझे पता था उसका
नाम गील बाबा है पर उसक हर समय डडा पकड़े रहने के कारण मैंने
उसका नाम रख लिया था—मूसलनाथ । धनु तरे का" कहता हुआ वह
इलायचा और मिथी का फिर मुट्ठा म भीच लेता था और मुझे अपनी
बाहो म दबावन के लिए आगे बढ़ता था । तब म मैं दीड जाता था ।

आज पता नहीं क्यों, ऐसा लग रहा है कि अगर वह आज एक बार
मुझे फिर भोली म दबाचकर जोगिया के नाम पूछ ता सार नाम बताये
क बाद मैं सिफ यही कहूंगा—तारा नाम मुझे मातूम नहीं पर मरा नाम
है—भिक्षानाथ । अपने आपसे इससे बड़ा मजाक मैं और क्या कर सकता
हूँ

सिद्ध मकरध्वज बनाने का नुस्खा सिफ गील बाबा का माना है, पिछन
बरस उमन महत जो को बनाकर लिया था, सारा साल उट जाडा का दद
नहीं हुआ था । तब बरस वह फिर बना रहा है और तब बरस उसन महत
जो के कहन पर मुझे उसका नुस्खा लिखा दिया है—सोना घाठ ताल, पारा
एक सेर, घोलिसार गधक दो सेर । इन सोना चीडा का पहल साल कपास
के फूलो के रम मे फिर घीबुघार के रम मे घाटकर घातना । गंगा म
छालकर मुह पर सडिया मिट्टी लगाकर, आर मुल्लाना मिट्टी क पाचे
कपडे की मात तहें बोनत पर सपटकर मुखा सना । इस शीशी का एक
हाडी मे सीधा रखना, और उसके चारा तरफ बाधू रन भर देना । बताग
पहर प्राग की एकमार घाघ देना । फिर बोनत क मुह पर उडकर जो साल
प्राय जम जाएगा—वही मकरध्वज होगा

और गील बाबा न यह नुस्खा तिसात्रे हुए भरे कान का मराटकर

हा था—अनाडी हकीम की तरह कुछ कच्चा-पक्का किसी को न खिलाता । पारा कच्चा रह गया, तो खाने वाले की हड्डिया गल जाएगी...

जवान रोक ली थी, नहीं तो जवान से निकलने लगा था—मूसल बाबा ! भिक्षा भी कच्चे पारे की तरह होती है, खाने वालों की हड्डिया गल जाती हैं ।

पारे को शिव-घातु कहते हैं, भिक्षा को पता नहीं क्या कहते हैं... भिक्षा को मा-घातु कहना चाहता हूँ ।

वह मेरी मा आज भी आई थी । दवे पाव चलती हुई वह मेरी कोठरी तक आ गई थी । वह जब दुवककर आती है, मुझे हमेशा एक विल्ली का ख्याल आता है । कल सारा दिन यही ख्याल आता रहा था—सारा दिन हमारे डेरे में एक विल्ली को पकड़ने की भाग-दौड़ होती रही थी । एक कोठरी में दूध की कटोरी ऐसे दहलीज के पास रख दी गई थी, कि विल्ली ने जब कटोरी को मुह मारा था, बाहर तक के पीछे खड़े साईं भगत राम ने तुरन्त दरवाजा भिड़का दिया था । विल्ली कोठरी में बन्द हो गई थी । पर जब दूसरी कोठरी में से बीच के दरवाजे को खोलकर, विल्ली को पकड़ने का यत्न किया गया तो वह उछलकर खिड़की के ताक से ऐसे जा लगी कि खिड़की की पतली-सी कुडी टूट गई, और विल्ली उस खिड़की में से बाहर कूद गई । लेकिन आखिर डेरे के तीन साधु उसके पीछे पड़े हुए थे, शाम तक उन्होंने विल्ली को पकड़ ही लिया—और आज उस विल्ली को मारकर उसकी एक हड्डी को त्रिफले के पानी में पीसा जा रहा है । गोविन्द साधु को पिछले दिनों से एक फोडा हो गया है । जील बाबा कहते हैं कि यह भगंदर है, और उसके ऊपर लगाने के लिए विल्ली की हड्डी का लेप तैयार करना है ।

कल सारी रात में सपने में एक विल्ली पकड़ता रहा था—हालांकि दिन में विल्ली पकड़ने के लिए मैंने किसी का साथ नहीं दिया था—पर

सपने मे मैं ऊँचे नीचे पत्थर पर मे गुजरता एक बिल्ली के पीछे-पीछे दौड़ता रहा—और अजीब बात थी कि मेरे आगे आगे दौड़ने वाला चीख कभा एकदम बिल्ली बन जाती थी कभी मेरी मा

भुँके पता नहीं भगदर फोडा क्या होता है, उससे बस पीप बहता है, और उसमे बसे टीसैं उठती हैं—पर मेरी हड्डियों में एक दर् है एक एक हड्डी में एक एक जाड़ में, एक एक स्थान में

और बड़ा ही भयानक स्थान आया है—मन के इस फोडे पर लेप करन के लिए अगर मा की पसली को पीसकर

मनु ने इक्कीस नरक माने हैं, ब्रह्मवैवन्त में धियासी नरक कुण्ड लिखे हुए हैं—और मेरा यकीन है उनमें से एक नरक कुण्ड जरूर मेरे मन की हालत जसा होता होगा ।

तीन

गोविन्द साधु को शील बाबा की दवा से गायद सचमुच आराम हो गया है—आज उसका घुघरू वाला डडा फिर उसकी पत्थर की कूडी में छनक रहा है । वह भाग घाट रहा है और उसका गूगापन भी घुघरू वाले डडे की तरह छनक रहा है । 'दे रगडा मस्त कलदर दे रगडा ' यह बोल उसे सार्द भगत राम ने सिखाए थे—जो उसके गले में से छनकर बन जाते हैं—गे ग' ग

पता नहीं यह घुटती हुई भाग की ठडी-सी गध है या कुछ और—अचानक भुँके ठड सी लगने लगी है । पर ऐसा कई बार लगता है, बढे-बढे लगन लगता है—कई बार धूप में बढे हुए भी और कई बार रज्जई में झोते हुए भी

बहुत छोटा था, स्कूल पढ़ने के लिए जाता था, तो एक दिन मेरा सहपाठी रलिया स्कूल से लौटते वक्त मुझे अपने घर ले गया—आदर की चीज था, इसलिए रलिये की मा ने मेरे बैठने के लिए मूड़ा डालकर, मूड़े पर खेस बिछा दी थी। और मैं सारे घर में एक अलग-सी चीज की तरह उस मूड़े पर बैठ गया था।

रलिया के लिए उसने मूड़ा नहीं बिछाया था। बल्कि उसने उसे झिड़ककर उसकी बाह अपनी तरफ खींची थी—“यह मुह पर तूने स्याही कहा से लगा ली?” और अपने दुपट्टे के पल्लू से उसने रलिये का मुह रगड़कर पोछा था। सूखे पल्लू से स्याही नहीं छूटी थी, इसलिए उसने कन्नी को थोड़ा-सा थूक लगाकर, उस कन्नी को रलिये के मुह पर रगड़ा था।

रलिया उससे बाह छुड़ाकर और हाथ में पकड़े हुए वस्ते को जल्दी से कहीं रखकर, मेरे साथ जाने के लिए आतुर था, पर उसकी मा ने फिर डाट दिया, “जाता कहा है भूखा पेट लेकर, बैठ जा सीधा होकर, निकम्मी औलाद!” और फिर उसी पल बड़े दुलार के कहने लगी—“किसी को घर लाकर कोई भूखा थोड़े ही भेजा जाता है? बेअकल, अभी मैं गर्म-गर्म रोटी पका देती हूँ, तू भी खा और अपने दोस्त को भी खिला...” और उसने रलिये को समझाते हुए उसका माथा घूम लिया था।

एक औरत नहीं, जैसे एक फिरकी माथा घूम रही थी।

घूल्हे में अघजली लकड़ियों का धुआँ सारे घर में घूम रहा था। रलिया ने जब अपना वस्ता फेंका था तो उससे एक किताब उधर गिर गई थी। रलिया का छोटा भाई खटोले पर सोता हुआ अचानक रोने लगा था, उसके मुह पर बँठी मक्खियों ने शायद बहुत जोर से भिन-भिन की थी। रलिये की मा ने जैसे एक हाथ से घूल्हे को हवा की और

दूसरे हाथ से हलिया की बस्ती से गिरी किताब को उठाकर पहले माथे से लगाया और फिर बस्ती में रखा, और एक हाथ से खटौल पर री रहे बच्चों के मुंह पर से मक्खियों को उड़ाया लग रहा था कि शिव के तीन नेत्रों की तरह हलिया की माँ के तीन हाथ थे

बड़ा मला घसमला सा घर था—पर लकड़ियों की तिड़ तिड़ में से, मक्खियाँ की भिन भिन से से हलिया को पड़ती झिड़कियों में से, और हलिया के मुँह को घूमती उसकी माँ के झूक में घुल मिलकर एक सेंक-सा उठकर मेरी तरफ आने लगा था—एक गर्माई सा

मैं फिर कभी हलिया के घर नहीं गया पर कभी कभी अध्यात्मक बैठे बैठे या सोते हुए मुझे ठंड सी लगती है, और पता नहीं क्यों मुझे बचपन की वह बात याद आ जाती है

चार

जन गिर्वरात्रि का माँ ने जग रखा था पूजा के लिए महान् विरपा-सागर जी को बुलाया था। सुना है कि उसका यह ताकीद थी कि पूजा के समय मैं भी उतर उनके साथ आऊँ।

मुहूर्त टालने के लिए मैं मंदिर के पिछवाड़ा जंगल में इस तरह छुप गया था कि भगर के मुझे दूढ़त ता पूजा का मुहूर्त गुजर जाता।

पता लगा कि वह पूजा के वक्त राए जा रही थी

भाज साहू भगनराम ने उसका वह गप्पा में एक बात बताई—
“इस सड़क का रंग मेरे मन की जगह पानी भरा हुआ है।”

मुनकर हनी-सी आ गई है। मेरा क्या है, उसने ठीक कहा है। पद्मपुराण में एक कथा आती है कि माकण्डेय ऋषि जब तप कर रहा था,

तो आसपास खाने के लिए पत्तों के सिवा कुछ न था। सो वह बरतक पत्ते खाता रहा, और उसके शरीर में खून की जगह हरे पत्तों रस भर गया। ऋषि ने जब अहंकार से भरकर यह बात महान को बताई तो महादेव ने उसका अहंकार तोड़ने के लिए दिखाया उनके शरीर में खून की जगह भस्म भरी हुई है। मला अगर ऋषि की नाडियों में खून की जगह पत्तों का हरा रस हो सकता है, महादेव की नाडियों में भस्म, तो मेरी नसों में ठंडा पानी क्यों नहीं सकता ? आखिर मैंने अपने जन्म से लेकर अब तक मन्दिर वाली न का पानी पिया है...

पां

आज फिर मुझे हसी-सी आ रही है। हसी पता नहीं क्या होती पर जो कुछ आई थी शायद हसी ही थी।

मैं शिव जी की मूर्ति के पास खड़ा था। यह प्रार्थना का समय था मन्दिर की दहलीजों में से गुजरते हर किसी का हाथ लोहे के घण्टे एक बार जरूर छू लेता था, और घण्टे की आवाज प्रार्थना के वों से टकरा रही थी—आवाज बहुत भारी थी, इसलिए वह साबुत श सिर्फ बोल टूट रहे थे ।

जै जै जै जै जै त्रिपुरारो
कर त्रिशूल सोहत छवि भारी
शारद नारद शीश नवाय
नमो नमो जै नमोशिवाय...

और मैंने देखा—सामने मेरी मां भूतिया बे आगे दोनों हाथ जाड़े लटकी थी। पर्यर की छन से छनकर बूद-बूद पानी भूतिया पर भा गिरता रहता है और दगकों पर भी। उसके सिर के पत्ते पर भी पड़ रहा था—और वह बिल्कुल भीगी हुई बिल्ली की तरह सग रही थी—पर हसी इस बात पर नहीं आई थी—इस बात पर आई थी कि आज हमने अपने बालों का मेहनी स रगा था। मेहनी का दयाल मुझे बड़ी देर ब्रां भाया यह याद करके कि कुछ तिन हुए उसने मेरे सामने माथे की बल पटिया की दबात हुए साइ मगताराम से सिरका का इलाज पूछा था और साइ ने उस मेहनी पीसकर सिर पर लगाने के लिए कहा था। पर भवानक जब उसके बाल साल से देगे—ता मुझ लगा वह आज वाली और सफेद बिल्ली की जगह भवानक भूरी बिन्नी बन गई था और वह बिल्ली की तरह म्याऊ म्याऊ करती लग रही था—

की-ही दया तहाँ करी सहाई
नीलकंठ तब नाम कहाई
प्रगटे उदधि मयन म ज्वाला
जरे मुरासुर भये बेहाला

जिस्म में एक कपकपा सी आ गई—याद भाया बहुत छोटा था अभी अलग कोठरी में सोने लामक नहीं था। चार बरस का होऊंगा महत किरपासागर जा की कोठरी में बिछे उनके आसन के पास ही एक चटाई पर सोता था, और भवानक एक रात आंस खुल गई थी—मामने जो कुछ दिखा था उसे देखकर घिघियाकर रा पड़ा था। वह ता आदमकद कोई चीज थी पर उस वकत वह सारी कोठरी में पली हुई लगती थी—एक बहुत बड़ा और स्याह वाला मुह था जिसपर दोनों आख सफेद और

लाल रंग में जलती दिख रही थी। सिर पर कुछ हरे-हरे पख भूल रहे थे।

महत किरपासागर जी ने मुझे उठाकर अपनी गोद में ले लिया था, पर मैं रोए जा रहा था, और कापे जा रहा था।

“तू उसे हाथ लगाकर देख, यह तुझे कुछ नहीं कहेगा” महत जी ने एक बार मुझे अपनी गोद से हटाकर उसकी तरफ करना चाहा था, मेरा डर उतारना चाहा था, पर उसकी तरफ देखते ही मेरी फिर चीख निकल पड़ी थी।

सवेरे दिन के उजाले में, बाहर पेड़ों की खुली जगह पर, महत जी ने मुझे बिठाकर, और उसे भी सामने बिठाकर मुझे समझाया था—
“यह बड़ा अच्छा आदमी है, दीवाना साधु, हरिया बाबा।”

बहुत देर बाद मुझे समझ आई कि साधुओं का एक समुदाय दीवाने साधु कहलाता है, और इस समुदाय के सारे साधु मुह पर काला रंग मल कर, सिर पर मोर के पख टूंग लेते हैं।

पर उस रात की भयानकता बड़ी देर तक मेरी याद में अटकी रही थी—एक कुछ बहुत काला-सा, मेरी आंखों के आगे फैला हुआ, और उसमें मोर का एक रंग-विरंगा पख हिलता हुआ ..

आज की इस घटना से पता नहीं उसका क्या सम्बन्ध था—मा के मेहदी रंगे वालों को देखकर मुझे मोर का पख याद आ गया। लगा मेरे सामने एक बहुत बड़ा खालीपन है—और उसी काले खालीपन में मेहदी रंग का एक गुच्छा लटक रहा है—मोर के पख की तरह।

उसके होठ बराबर फड़क रहे थे—

स्वामी एक है आस तुम्हारा
आय हरो मम सकट भार

शकर ही सकट बं नागन
सकट नाशन विघ्न विनागन

मा की माखा के आगे पतली पतली भुरिया का एक जाल-सा फैला हुआ है। आखें उस जाल में फँसी हुई लग रहा हैं नहीं तो कई बार ऐसा लगता है अगर वे जाल में फँसी हुई न हो तो उसके मुह से उड़कर सीधा मरे मुह पर आकर बैठ जाए

पर काले और फले हुए खालीपन में ये आखें मुझ कभी-कभी ही दिखती हैं नहीं तो काला और फला हुआ यह खालीपन बड़ा अडोन् हाता है। सिर्फ आज यह लग रहा है कि उस खालीपन में महदी रगे वाला का गुच्छा लटक रहा है—मार के पक्ष की तरह।

छ

भुलावा एक बार हो सकता है, दो बार हा सकता है, पर यह जा राज—घाए तिन—सगता है—यह शायद भुलावा नहीं होगा

प्रभान का समय था। पूजा के समय मंदिर में खड़ा था, मूर्तियाँ के बिल्कुल पास था इसलिए मूर्तियाँ के चरणों में चढ़ाए हुए पून मरे परा तक भा पहुँचे हुए थे और फिर मुन्द्रा ने पूजा की एक झाली इस तरह पलटा कि मर पर उनक नाचे दब गये। और फिर जब मुन्द्रा ने जमान तक माया भुकाकर मूर्तियाँ का प्रणाम किया तो लगा कि उसका एक हाथ मर पर का छू रहा था।

जरा-सा चौककर मैंने आखें नाचा कर ली—अपने परा की तरफ—

पर पैरो के ऊपर, और पैरो के गिर्द, फूलों का इतना ढेर था कि न अपना पैर दिखता था न उसका हाथ ।

यह भुलावा भी हो सकता था, इसलिए इस बात की तरफ फिर कभी ध्यान नहीं दिया । पर यह जिस दिन की बात है, उसके तीन-चार दिन बाद सक्रान्ति थी । रोज मन्दिर में न इतने भक्त आते हैं, न इतने फूल चढ़ते हैं, पर सक्रान्ति वाले दिन, पूर्णिमा वाले दिन, अमावस वाले दिन, या और किसी ऐसे दिन, छोटे-से मन्दिर का सारा चबूतरा फूलों से भर जाता है । उस दिन, सक्रान्ति वाले दिन फिर ऐसा लगा था—सुन्दरा ने फूलों की एक भोली मूर्तियों के चरणों में पलटी थी, और फिर मूर्तियों के चरणों में सिर झुकाती हुई, फूलों के ढेर में से बाह गुजारकर, लगा, मेरे एक पैर पर अपने हाथ की हथेली रख दी हो ।

मन का जोर-सा लगाकर, दूसरी बार की घटना को भी एक भुलावा कह लिया था । पर पूर्णिमा वाले दिन फिर ऐसे ही हुआ था, अमावस वाले दिन फिर इसी तरह, और इससे अगली सक्रान्ति वाले दिन... कल फिर .

उसने और कभी कुछ नहीं कहा । पर बहुत दिनों की एक बात है—तब मैंने इस बात को भी एक संयोग ही समझा था—पर यह गायद संयोग नहीं था ..

वह अपने खेतों की मेड़ पर चलती गाव की तरफ लौट रही थी । शाम का अंधेरा इतना गहन हो गया था कि एक बार देखकर भी जो कोई अपने ध्यान में हो जाए, तो यह नहीं पता लगता था कि किसी ने देखा या पहचाना था या नहीं । मैं अपने ध्यान में नदी की तरफ जा रहा था । नदी विल्कुल उसके खेतों के सामने पड़ती है—और फिर लगा वह भी नदी की तरफ लौट पड़ी थी ।

कुछ आगे जाकर मैंने पीछे एक बार देखा था—वहा तक, जहां तक

लगा कि वह नदी के किनारे जाकर खड़ी हो गई। एक भावाज-सी सुनाई दी जैसे वह नदी की तरह एक लम्बी भावाज में गा रही थी—

पीछे मुड़कर ज़रूर देखा था पर इस तरह नहीं कि उसको यह दिख जाए कि मैं उसकी भावाज सुनकर खड़ा हो गया था। एक पड़क तने के पास हाकर जरा घूम सा गया था।

देख सकता था—वह गा रही थी पर बिम्बुन अपने ध्यान में। नदी के किनारे पानी में हाथ लटकाकर कुछ गा रही थी—गायत्री मंत्रों से जो साग सञ्जी तोड़कर लाई थी उस गा रही थी। अंधेरे में बहुत कुछ नहीं स्पष्ट रहा था। पर यह दिख रहा था कि वह बची बेखबर थी न उस तरफ नज़र रहा थी जिस तरफ मैं गया था न किसी और तरफ। सिर्फ जो कुछ गा रही थी, वह बड़ा अजीब था। उसकी पकितया पुराने मकान के किस्से में से था, पर वह पकितया, जिनमें उसके नाम जसा नाम आता है

मैं भुलनी हा, तुसी न हार काई
लाइयो जोगियाँ नाल प्रीत लोको ।
जगल गये न बौहडे सुदरा नू
जोगी नही जे किस दे मोन लोको ।^१

पड़ के तने के पास मैं कुछ देर खड़ा रहा था।

य पकितया न जान क्या ठे पानी के छीटा की तरह लगा थी।

१. सुझमे भूल हूँ तुम कोई यह भूल मत करना, तुम कोई चागिली से प्रीत मत करना। मुझ सुन्दर के पास वह फिर लौटकर न आया वह धमा चगलों में चला गया कि फिर वहा खो गया। जोगी किस'न दोस्त नहीं होते।

मैंने अपने कंधे पर रखी हुई खट्टर की गेरुई चादर जरा कसकर दोनों कंधों पर लपेट ली थी...

पर देखा था, वह फिर वेध्यान नदी के किनारे से लौट पड़ी थी—सीधी गांव को जाती हुई पगडंडी पर। और लगा था—उसकी आवाज सयोग से मेरे कानों में पड़ गई थी, उसने जान-बूझकर मेरे कानों में नहीं डाली थी।

वैसे एक बात उस दिन रह-रहकर मेरी याद में अडती रही थी—बहुत साल हुए, जब मैं छोटा था, गांव की औरते जब कन्या जिमाती थी, मुझे मन्दिर में से जबरन पकड़कर ले जाती थी, 'यह हमारा वीर लगूरिया' कहती थी, और मुझे छोटी-छोटी लडकियों की पगत में बिठा देती थी।

और एक बार की बात है—इसी सुन्दरा की मा ने कन्याएँ जिमाई थी। उस दिन सुन्दरा ने सिर पर गोटे वाली लाल चुनरी ओढ़ रखी थी। उसके हाथ भी लाल थे, वह हम सबको अपनी हथेलियाँ दिखा रही थी—“देखो बल्ला जी, मैंने मेहदी लगाई है।” और सुन्दरा की मौसी ने सब लडकियों के पैर धोकर उनको जब मौली बांधी, और एक पंगत में बिठाया, तो मुझे सुन्दरा के पास बिठाती हुई जोर से सुन्दरा की मा से कहने लगी, “ओ बहन ! जरा एक बार इधर देख। ये दोनों जने सुन्दरा और पूरन की जोड़ी लगते हैं। यह छोटा-सा साधु सचमुच किसी राजा का बेटा लगता है...”

छोटी-छोटी थालियों में पूरी, हलवा और छोले देती हुई सारी औरते हस पड़ी थी। उस वक़्त मुझे बिल्कुल पता नहीं लगा था कि वे क्यों हसी थी। सुन्दरा को भी पता नहीं लगा था...पर फिर जब मैंने कुछ वरसों बाद 'पूरन भक्त' का किस्सा पढ़ा...तो फिर एक बार दशहरे के मेले में जब सुन्दरा सुसराल से आई हुई थी, और अपनी मौसी

की बेटों को मला दिखाती, भ्रष्टानक मेरे सामने आ गई थी ता हसकर उसने अपनी मौसी की बेटों को कहा था— ले देख ल —मरा पूरन मरा जोगी ”

पर यह बहुत दिनों की बात थी । सिर्फ उम्र दिन रट रटकर मरी यात्रा में उसक रहा थी जिस दिन नदी के किनारे मैं उस बेलबर गाते सुना था—नदी की तरह लम्बी आवाज में वह कह रही थी— मैं भूती हूँ तुमसे स काई और जोगिया स प्रीत न लगाना

लेकिन फिर इस बात का भी एक अजब सा सयाग समझ लिया था ।

पर यह जो रोज़—आए दिन फूला के ढेर में छुपा हाथ मरे पर को छू जाता है

पर कुछ देर के लिए सुन सा हा गया लगता है । किसी क्या-कहानी में जैसे कोई राजकुमारी फूल तोड़न जाती है फूलों को किसी डाली को हाथ लगाने है डाली में लिपटा हुआ माप उसकी उगली को ढस जाता है और वह वही भूच्छित होकर फूलों की भाँड़ी में गिर पड़ती है—मरा पर भी फूला के ढेर में भूच्छित-सा हो जाता है

उसकी बाह एक सापिन की तरह फूलों के ढेर में फुकारती सी लगती है ।

सात

भाजकल महत जी का दाया गाल सूजा हुआ है । उनकी दा दाँवें दुखती हैं । पर पूजा के नियम में उहाँन कोई फक नहीं आने दिया । सिर्फ इतना फक पड़ा है कि श्लोको के सारे गद्द उनके मुह में दाँवों की तरह अटके लगते हैं—हिलते भी हैं पर बाहर नहीं निकलते ।

साईं भगतराम आजकल दो वक्त उनके लिए लपसी बनाता है, सिर्फ पतली-पतली लपसी उनके अन्दर जा सकती है, और कुछ नहीं। पहले वे रोज सवेरे, रात की भीगी बादाम की गिरिया छीलकर और शहद में डालकर खाते थे, पर अब गिरिया चवाई नहीं जा सकती, इसलिए कुछ गिरियो को पीसकर लपसी में मिला लिया जाता है। वे नियम से जिस वक्त लपसी पीते हैं, एक कटोरी लपसी मुँहे भी जरूर पिलाते हैं, अपने पास बिठाकर। जैसे शहद और गिरिया पहले रोज अपने पास बिठाकर खिलाते थे। सिर्फ यह पता नहीं लगता कि इस सब कुछ को मैं जिस एक शब्द 'उनकी किरपा' से जोड़ना चाहता हूँ, वह जुड़ता क्यों नहीं...

रात जब वे सोने लगते हैं, साईं भगतराम नियम से उनके पाव दवाता है। मैंने कई बार चाहा कि साईं भगतराम का यह नियम, मैं अपना नियम बना लूँ, पर उन्होंने हर बार अपने हाथ के इशारे से मुँहे पैरो की तरफ से हटा दिया। पता नहीं, उन्हें मेरी सेवा क्यों स्वीकार नहीं? वैसे 'सेवा' शब्द को लोग जिन गहरे अर्थों में लेते हैं, मैं इसे उस तरह कभी भी नहीं ले सका। यह सिर्फ एक नियम की तरह लेना चाहता था—सवेरे उठने के नियम की तरह, या कीकर की दातुन करने के नियम की तरह। पर मुँहे इस नित्य-नियम में डालना, लगता है उन्हें मजूर नहीं। या शायद उन्होंने इसे इसके असली रूप में देख लिया है—यानी 'सेवा' से बहुत छोटे रूप में। और इस छोटे रूप में उन्हें यह मजूर नहीं हो सकता।

अब कोई तीन दिनों से साईं भगतराम लपसी में पोस्त के डोडे भा पीसकर डाल देता है, ताकि उन्हें जल्दी नींद आ जाए, और दाढ़ों का पीड़ा से उन्हें कुछ देर के लिए चैन मिल जाए। इसलिए वे रात को जब बहुत जल्दी ऊँघने लगते हैं, मैं साईं भगतराम को उसकी 'सेवा' से उठाकर खुद उसकी जगह ले लेता हूँ। ऊँघते हुए वे यह नहीं पहचान

सब कि उनका पाँच का दवाने हाथ मेरे हैं या साइ भगत राम के। पर हैरानी मुझे उनपर नहीं, अपने आपपर हो रही है—कि यह मेरा नियम था कि दहली से मुमन से भी इतना दूर है कि उनके परो को दवाने का काम मैं जितनी देर अपने हाथों को धुंधी तरह मस मतकर न पा लू मो नहीं सकता।

समझ नहीं सकता पर नफरत जसी कोई चीज है जो मेरे मुह में एक दाढ़ की तरह उगी हुई है।

लगता है—जो कुछ खाता हू इसी दाढ़ से चबाता हू। चाहे कई बार यह भी लगता है—कि इस दाढ़ में बड़ी पीड़ा हो रही है। यह मेरे मुह में टिन रही है पर निकलती नहीं।

और कभी यह सोचता हू कि कहीं किसी दिन कोई चिमटी सी मिल जाए तो उसके साथ खींचकर इस दाढ़ को हमेशा के लिए अपने मुह से निकाल दू।

पर फिर कुछ नहीं होता। पीड़ा भी नहीं होती। बल्कि फिर हर चीज का इस दाढ़ से चबाने में स्वाद आता है।

हर एक चीज को हर एक स्थान को जैसे आज सुबह जब महन किरपासागर जो पूजा के श्लोक पढ़ रहे थे, और श्लोकों के सारे शब्द उनके मुह में दाढ़ों की तरह अटके हुए थे, तो अचानक मुझे जाग्यार आया था वह यह था—कि जा ये मुह खोल दें, तो मैं हाथ में एक चिमटा ले लू और श्लोकों के सारे शब्द खींचकर उनके मुह से बाहर निकाल दू।

यह किसी के लिए भी एक भयानक स्थान है। पर एक पुजारी के लिए चाहे उसकी उम्र बीस बरस क्यों न हो—अति भयानक है।

पर मैं सारा दिन इस स्थान का स्वाद लेता रहा हूँ—जैसे यह एक गिरी का टुकड़ा था जो अपनी दाढ़ से चबाता रहा हूँ।

गिरी में से एक सफेद दूध-सा घूंट रह-रहकर मेरे अन्दर उतरता रहा था...

आज मेरी दाढ़ में बिल्कुल कोई पीड़ा नहीं हो रही।

आठ

हे ईश्वर !

ईश्वर पता नहीं क्या चीज़ है, यह शब्द एक आदत की तरह मुह से निकल गया है।

आदत की तरह नहीं, दुखी हुई सास की तरह।

शील बाबा ने एक दिन मकरध्वज का नुस्खा लिखवाते हुए कहा था—“अनाड़ी हकीम की तरह कुछ अघकचरा करके किसी को न खिला देना। पारा कच्चा रह गया तो खाने वाले की हड्डियां गल जाएंगी...” और आज मैंने कच्चा पारा खा लिया है।

रोज नफरत की एक गिरी-सी खाता था। आज कच्चा पारा खा लिया है।

शायद हर जिन्दगी एक मकरध्वज होती है। ईश्वर जब भी किसी इन्सान को पैदा करता है, जिन्दगी नाम की चीज़ मकरध्वज की तरह उसे खिला देता है। और इन्सान हंसता है, खेलता है, जवान होता है, और उसकी जवानी धरती पर ठुमक-ठुमककर चलती है... घमकके चलती है...

और लगता है—ईश्वर ने जब मुझे जन्म दिया था और जब जिन्दगी नाम की चीज़ उसने मुझे मकरध्वज की तरह खिलाई थी, उस दिन एक अनाड़ी हकीम की तरह मकरध्वज बनाते हुए उससे पारा कच्चा र

गया था

यह कच्चा पारा गायद मैंने आज नहीं खाया, अपने जन्म के समय ही खा लिया था सिर्फ आज उसका अंतर को देख रहा हूँ—क्याकि आज लग रहा है कि मेरी हड्डिया गलती गुरू हो गई है

आज प्रातः काल—सुबह की पहला विरण क साय—महत किरपा सागर जी को लगा कि उनकी उम्र के दिन पूरे हो गए है । उन्होंने साइ मगतराम के वध का सहारा लिया, चारपाइ पर स उठे, और जस-तसे मंदिर मे पहुच गए ।

मुझे बुलाया । एक नारियल मेरी झाली म डाला । और फिर जरी की एक पगड़ी गिव पावनी के चरणो स छुआकर मेरे सिर पर बाध दी । अपनी सारी पदवी मुझे सौंप दी ।

फिर मेरे आगे—अपनी पदवी के परा के आगे—खुद ना सिर झुकाया, साइ मगतराम और गोविंद साधु का भी सिर झुकाने क लिए कहा और फिर उसके बाद जो कोई भी माथा टेकने क लिए आया उसे भी ।

‘ सोचा था बहुत बड़ा समागम करूंगा । पर अब वक्त नहा उनको सिर्फ एक छोटी सी यह हसरत आई थी, वैसे वे बड़े सुखरू लग रहे थे ।

योग्यता नाम की कोई चीज न कभी मुझे अपने में लगी थी न उस वक्त लग रही थी । बल्कि अपना आप उस वक्त

याद आ रहा था कि मगल नाम का एक साधु कुछ बरस हुए, इस ढेरे म आकर रहा था । वह जहा भी बैठता था पाम से गुजरते हर कीड़ को हाथ से मारता रहता था । दिन मे न जाने कितने कीड़े मारता था । उसका कहना था—मैं इस तरह कीड़ो को इनकी जून से छुड़ा रहा हूँ

उस वक्त जरी तिल्ले वाली पगड़ी सिर पर बाधकर—मुझे अपना

प बिल्कुल उस कीड़े की तरह लग रहा था, जिसे उसकी जून से छुड़ाने लिए किसी मगल साधु की जरूरत थी।

पर कहीं कुछ नहीं, कहने का कुछ हक भी नहीं था।

शाम तक महत किरपासागर जी को और भी यकीन हो गया कि उनकी उम्र के दिन पूरे हो गए थे और वह शायद आखिरी दिन था। वको अपनी कोठरी से बाहर भेज दिया गया। आज उनकी हालत को बते हुए मन्दिर में आए कितने ही श्रद्धालु, मन्दिर में वापस नहीं गए थे, उन्होंने सबको वापस जाने का हुक्म दिया।

और फिर मुझे अकेले कोठरी में बुलाया। पैरो के पास ही मैं बैठ गया। उन्होंने पैरो के पास से उठाकर अपनी बाह के पास बिठाया। अपनी आखों के सामने।

पिछले कई दिनों से मुंह की सूजन की वजह से उन्हें बोलने में शिकल होती थी, पर उनके आधे-से उच्चारण को समझने की आदत ड गई थी। इसलिए उन्होंने जो कुछ कहा, समझने में कठिनाई नहीं आई।

समझने के लिए तो शायद इतनी कठिनाई हुई है कि सारी उम्र भी कुछ समझ में नहीं आएगा, पर सुनने में मुश्किल नहीं हुई।

“सिर की पदवी, सिर का भार, जिस तरह उतारकर तुझे दिया, उसी तरह मन का एक भेद, मन का भार भी उतारकर तुझे देना है...”

सुबह जिस तरह तिल्ले की और जरी की पगड़ी सिर पर रख ली थी मैंने, और मुह से कुछ नहीं कहा था, उसी तरह जो कुछ उन्होंने बताया, छाती पर रख लिया मैंने, और मुह से बिल्कुल कुछ नहीं कहा।

सिर्फ यह लगता है—सिर शायद साबुत रहेगा, पर छाती साबुत नहीं रहेगी।

“ आज जो भी पदवी तुम्हें मिली है, यह तेरा हक था, यह सिर्फ तुम्हें मिल सकती थी

“ जिस तरह जो कुछ भी किसी बाप के पास होता है, बेटे को मिल जाता है। अमीर बाप से अमीरी, फकीर बाप से फकीरी

“ मुझे सब कुछ मिला, खजाना नहीं मिली। इस खजाना से तुम्हें बेटा नहीं कह सका इस वक्त सिर्फ भगवान् हाजिर है, और कोई नहीं और भगवान् की हाजिरी में मैं तुम्हें एक बार बेटा कहकर मरा अपना बेटा ”

य सार शब्द ज्यो-ज्यो उनके मुह से निकलते गए—मैं अपना छाती पर रखता गया। देखने का जानने का, और साधन का वक्त नहीं था, सिर्फ इन्हें पकड़-पकड़कर छाती पर रखता गया।

‘तेरी मा एक पुण्यात्मा है उसे कभी दाप नहीं दना भगवान् ने खुद उसे सपने में दर्शन दिए इस सयोग का हुक्म दिया उसने सिर्फ हुक्म माना और मैंने सिर्फ एक बार उसे अनाकार किया फिर कभी नज़र भरकर उसकी तरफ नहीं देखा उसकी साध पूरी हो गई उसने मन में सिर्फ एक बेटे की साध थी तेरी मरा भी जन्म-जन्म की तृप्ति मिट गई तेरा जन्म एक पुण्यात्मा का जन्म ”

कोठरी का दरवाजा खटका। दूर दूर के मन्दिरों का साधुआ तब महत जो की बीमारों का खबर कई दिनों से पहुँची हुई थी, पर आज सुबह मन्दिर के दारिद्र्य की निशुक्ति की बात भी गापद पहुँच गई थी, और उहोत भक्त नज़दीक जानकर आज जन्मी से उनकी खबर लेनी चाहो थी। उन आए हमों को कोठरी में बठाकर, मैं कोठरी से बाहर आ गया।

राज सोन से पहले कितनी देर तक मैं आसपास की पहाड़ी पग-

डडियो पर घूमता हूँ। आज भी वही पगडडियाँ हैं, पैरों की जानी-पहचानी हुई, पर पैरो को कई बार पत्थरो की ठोकर लगी है।

पैर कापते जा रहे हैं—टांगों के बीच की हड्डियाँ जैसे गलकर खोखली हुई जा रही हैं...कोई कच्चा पारा खा ले तो शायद ऐसे ही होता होगा...

नौ

अगर जन्म बदलना एक चोला बदलना है, तो मैं रोज़ दो चोले बदलता हूँ।

चार पहर एक चोला पहनता हूँ—डेरों के स्वामी होने का। और चार पहर दूसरा चोला, एक बड़े बदशक्ल कीड़े का।

‘कीड़ा’ शब्द जितना हीन है, ‘स्वामी’ शब्द उतना ही महान्। यह मेरे अस्तित्व के दो सिरे हैं।

हीनता और महानता।

जब सोता हूँ—देखता हूँ कि एक काले और बदशक्ल कीड़े की तरह मैं एक विल में से निकल रहा हूँ और मुझे ज़मीन पर रेंगते हुए देखकर मगल साधु अपने उपले सरीखे हाथ को मेरे ऊपर फैलाकर हस रहा होता है, ‘आ, मैं तुझे इस जून से छुड़ाऊँ’

जागता हूँ—पैरो के पास कई माथे झुके हुए होते हैं, और मैं एक पदवी के आसन पर बैठकर ज़मीन से ऊपर उठ रहा होता हूँ।

दोनों सिरों के बीच एक गुफा है, बड़ी सकरी और अधेरी। मन्दिर की एक दीवार में से निकलती गुफा की तरह। और कई बार मैं उन दोनों सिरों से बचने के लिए उस गुफा में घुस जाता हूँ।

यह मेरे काले और अंधेरे ख्यालो की गुफा है। मसलन कभी यह कल्पना करके देखता हूँ कि मेरी माँ ने महत किरपासागर जी से एक बैटे का दान कैसे मागा होगा। महत किरपासागर जी ने उसके सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखकर फिर वह हाथ धीरे धीरे उसके अगो पर किस तरह केरा होगा। शायद अपनी काठरी में जाकर, या गायद मंदिर के पास लगे पेड़ों के घने झुण्ड में फिर सकेन्द्र और गेरुए कपड़े किस तरह कुछ देर के लिए एक दूसरे में गुथ गए होंगे।

तेरी माँ एक पुण्यात्मा। महत जी ने कहे हुए यशस्व गुफा के अंधेरे में बड़ी आरसे हसत हैं और फिर यह हसी एक जीते-जागते बच्चे की गल में बिलखकर रो पड़ती है।

मैं गुफा से बाहर भी भा जाऊँ, तो यह बच्चा उसी गुफा में पड़ा धिपियाकर राता रहता है।

महत जी के स्वर्गवास की खबर सुनकर, गाव की कोई औरत या मद ही होगा जो उनके आखिरी दर्शन करने न आया हो। माँ भी आई थी। गाव की सभी औरतों ने बारी-बारी महत जी के चरणों पर माथा टेका था और उनकी तरह माँ ने भी टेका था पर वह जब महत जी की लाश के परो के पास झुकी थी—मुझे उसके मुह पर दिख रहा था कि उस एक क्षण में उसके मुह की हड्डियाँ निकल आई थी। मेरा ख्याल है उस वक्त वह जरूर सोच रही होगी कि महत जी के स्वर्गवास से अगर वह पूरी नहीं तो आधी विधवा हो गई थी।

उसके 'आधी विधवा' होने के ख्याल से एक हमदर्दी सी हो आई थी। असल में हुई नहीं थी, सिर्फ मैंने सोचा था कि होनी चाहिए थी। और फिर मैं यह सोचने लगा था—आज यह हमदर्दी मुझे अपने साथ भी हानी चाहिए, क्योंकि अपने बाप की मृत्यु से मैं सही अर्थों में अनाथ

हुआ हू। पर यह हमदर्दी मुझे अपने से भी न आई।

चिता को आग दी थी—चेला होने के नाते भी देनी थी, बेटा होने के नाते भी।

एक वदन में दो नाते शामिल हैं; सिर्फ मैं शामिल नहीं। न उस वक्त, चिता को आग देते वक्त, शामिल था, न अब।

आज एक अजीब घटना घटी है, कितना शहर से कोई बड़ी अमीर-सी दीखती औरत आई थी। उसके साथ दो दासियां थी जिन्होंने मन्दिर में चढ़ाने के लिए फल और मिठाई उठा रखी थी। वह मन्दिर की इस ख्याति को सुनकर आई थी कि इस मन्दिर में मानता करने से सुखी हुई कोख भी हरी हो जाती है...

उसके हाथ प्रार्थना में जुड़े हुए थे, "कृष्ण खावे लड्डू-पेडा शिवजी पीवे भग, बैल की सवारी करे पार्वती जी के संग, मेरे भोला नाथ जी, मेरे काज सम्पूर्ण कर "

एक अजीब ख्याल आया था—कहते हैं, इतिहास अपने आप को दोहराता है। और आज शायद इतिहास ने अपने आप को दोहराना चाहा था

लगा—अभी उसकी प्रार्थना के जवाब में उसको कह दूंगा कि इस स्थान से हासिल किया हुआ बच्चा इसी स्थान पर चढ़ाना होता है। और फिर जब वह 'हा' कर देगी, उसका हाथ पकड़कर उसको अपनी कोठरी में ..

एक ग्लानि-सी हुई। लगा—इस औरत का हाथ पकड़कर जब अपनी कोठरी में ले जा रहा होगा, तब वह मैं नहीं होगा, वह मेरे रूप में एक बार फिर महत किरपासागर जी मेरी मा का हाथ पकड़कर

उसे अपनी कोठरी में

इसलिए उस औरत का कुछ नहीं कहा बल्कि धबकाकर धारों बंद कर ली। उसने गायद यह समझा था कि मैं उसके लिए प्रार्थना कर रहा था, क्योंकि फिर जब आखें खोलीं, वह बड़ी सन्तुष्ट होकर और प्रणाम करके चली गई थी

मन की अजीब दगा है—मा के साथ हमदर्दी करना चाहता हूँ—होती नहीं। फिर यह सोचकर कि इसान की मौत के बाद तो उसके साथ कुछ हमदर्दी हो जाना चाहिए महत किरपासागर जी के साथ हमदर्दी करना चाहता हूँ पर कुछ नहीं होता आखिर मैं एक अपना आप रह जाता हूँ। सोचता हूँ, तीन पात्रों में एक ही सही पर वह पात्र भी मेरी हमदर्दी का पात्र नहीं बनता

और जैसे महत जी के आखिरी क्षणों में उनके मुँह की सृजन भी उतर गई थी, पर उनकी हालत बिगड़ती गई थी हकीम ने बताया था कि मसूदा में पड़ा हुआ मवाज उतरकर अंदर मेदे में पड़ गया है—सगता है, मेरी नफरत भी माथे से उतरकर मेरे अन्दर मेरे मथे में पड़ गई है—किसीको कुछ कहना नहीं चाहता, पर मेरे अन्दर से रक्त की तरह कुछ गिरता बिलरता जा रहा है

दस

धाड़ू धाड़ू पड़ा पर जब मा पून लगने हैं, मेरी धारों अजाब तरह बेचैन हो जाती हैं। सगता है, यह सिर्फ मुझपर हमने बँटिए मिलता है। यह सिर्फ अब ही नहीं लगता, जब बहुत घाटा था तब मा लगता था कि मैं किसी अच्छे हुए पत्थर में से उग आई धाम की तरह हूँ और

शायद किसी को पता नहीं, पर आडुओ के पेड़ को यह भेद पता लग गया है—और वह जोर-जोर से खिलखिलाकर हस रहा है...

‘मेरी जड़ घरती की छाती के भीतर है, तेरी कहा है?’ वह कई बार कहता था, और बड़ी जोर से हसता था—इतने जोर से, कि उसके कई फूल झड़कर मेरे जिस्म पर गिर पड़ते थे—जैसे हसते-हसते किसी के मुह से थूक गिर पड़े।

मैंने उसके नीचे खड़ा होना छोड़ दिया, पास खड़े होना भी छोड़ दिया। पर वह दूर खड़ा हुआ भी हस सकता है, इसलिए जब उसकी हसी की आवाज कान में पड़ती है, मेरी आखें अजीब तरह वेचैन होकर उधर देखने लगती हैं।

पीपल की जड़ भी घरती में होती है, और पेड़ों की भी, पर ये अपने में मस्त रहते हैं—अपने हरे-पीले वदन में लिपटे हुए। आडुओ के पेड़ की तरह कोई भी खिलखिलाकर नहीं हसता।

पता नहीं, उसे इतनी बार हसने की क्यों जरूरत पड़ती है—जब कि मुझे पता है कि मैं किसी पत्थर की दरार में से अपने आप उग आई घास का एक तिनका हूँ, मेरी कोई शाखाएँ कभी नहीं निकलेगी, कभी कोई फूल नहीं लगेंगे, फूलों से कोई फल कभी नहीं बनेगे...

अगर बन सकते होते • महत किरपासागर जी ने जब अपनी आखिरी सासे लेते हुए इशारे से अपने पास बुलाया था, उस शाम जो भेद उन्होंने मेरे सामने खोला था, उनकी आखों में एक भेद की लौ थी, इस लौ को शायद वात्सल्य कहते हैं, पर मेरे वदन की नाड़ियों में कोई खून नहीं पिघला था। एक हुक्म में वधा मैं उनके पास हो गया था, पर उनके बोलते खून के जवाब में, मेरा खून कुछ नहीं बोला था। उनकी आंखों में एक धुंध-सी आ गई थी, शायद कोई हसरत-सी थी और फिर उन्होंने आखें बन्द कर ली थी...मैं पत्थर की दरार में से उग

उसे अपनी कोठरी में

इसलिए उस भीरत को कुछ नहीं कहा बल्कि पबराकर भागें बंद कर तीं। उसने शायद यह समझा था कि मैं उसके लिए प्रायना कर रहा था क्योंकि फिर जब भागें छातीं वह बड़ी संतुष्ट होकर भीर प्रणाम करने चली गई थी

मन की अजीब दगा है—मां के साथ हमदर्दी करना चाहता हूँ—होती नहीं। फिर यह सोचकर कि इंसान की मौत के बाद तो उसके साथ कुछ हमदर्दी हो जानी चाहिए महत किरपासागर जी के साथ हमदर्दी करना चाहता हूँ पर कुछ नहीं होता, आखिर में एक अपना आप रह जाता है। सोचता हूँ, तीन पात्रों में एक ही सही पर वह पात्र भी मेरी हमदर्दी का पात्र नहीं बनता

भीर जसे महत जी के आखिरी दिना में उनके मुह की सूजन भी उतर गई थी, पर उनकी हालत बिगड़ती गई थी हकीम ने बताया था कि मसूड़ा में पड़ा हुआ मवाद उतरकर अंदर मेदे में पड़ गया है—लगता है, मेरी नफरत भी माये से उतरकर मेरे अंदर मेरे मूत्र में पड़ गई है—किसीको कुछ कहना नहीं चाहता पर मेरे अंदर से रेत की तरह कुछ गिरता बिखरता जा रहा है

दस

आड़ूआ के पेड़ों पर जब भा फूल लगते हैं, मेरी आखें अजीब तरह बेचन हा जाती है। लगता है यह सिर्फ मुझपर हंसने के लिए खिलते हैं। यह सिर्फ अब ही नहीं लगता, जब बहुत छोटा था तब भी लगता था कि मैं किसी चटखे हुए पत्थर में से उग आई घास की तरह हूँ, भीर

शायद किसी को पता नहीं, पर आडुओ के पेड को यह भेद पता लग गया है—और वह जोर-जोर से खिलखिलाकर हस रहा है...

‘मेरी जड़ घरती की छाती के भीतर है, तेरी कहां है?’ वह कई बार कहता था, और बड़ी जोर से हसता था—इतने जोर से, कि उसके कई फूल भडकर मेरे जिस्म पर गिर पड़ते थे—जैसे हसते-हसते किसी के मुह से थूक गिर पड़े।

मैंने उसके नीचे खड़ा होना छोड़ दिया, पास खड़े होना भी छोड़ दिया। पर वह दूर खड़ा हुआ भी हस सकता है, इसलिए जब उसकी हसी की आवाज कान में पड़ती है, मेरी आखें अजीब तरह वेचैन होकर उधर देखने लगती हैं।

पीपल की जड़ भी घरती में होती है, और पेड़ों की भी, पर ये अपने में मस्त रहते हैं—अपने हरे-पीले वदन में लिपटे हुए। आडुओ के पेड की तरह कोई भी खिलखिलाकर नहीं हसता।

पता नहीं, उसे इतनी बार हसने की क्यों जरूरत पड़ती है—जब कि मुझे पता है कि मैं किसी पत्थर की दरार में से अपने आप उग आई घास का एक तिनका हूँ, मेरी कोई शाखाएँ कभी नहीं निकलेगी, कभी कोई फूल नहीं लगेगा, फूलों से कोई फल कभी नहीं बनेगा...

अगर बन सकते होते... महत् किरपासागर जी ने जब अपनी आखिरी सासे लेते हुए इशारे से अपने पास बुलाया था, उस शाम जो भेद उन्होंने मेरे सामने खोला था, उनकी आखों में एक भेद की लौ थी, इस लौ को शायद वात्सल्य कहते हैं, पर मेरे वदन की नाडियों में कोई खून नहीं पिघला था। एक हुक्म में वधा मैं उनके पास हो गया था, पर उनके बोलते खून के जवाब में, मेरा खून कुछ नहीं बोला था। उनकी आंखों में एक बुध-सी आ गई थी, शायद कोई हसरत-सी थी और फिर उन्होंने आखें बन्द कर ली थी...मैं पत्थर की दरार में से उग

आई घास का एक तिनका-भाहू भगर एक बीज की तरह घरती को छाती चीरकर उगा होता, ज़रूर मेरी किसी टहनी पर खून का फूल खिल पड़ता

सुदरा न भा यह भाजमाकर देख लिया है। भाजमाइस का दिन था—उसकी नहा, मरी भाजमाइस का।

मर लिए क्या हुक्म है? मंदिर के साथ के सुनसान जंगल में उसने मुझ पता नहा किस तरह डूब लिया था और मरे पास आकर, यह कहते हुए एक अनुनय से मेरी तरफ देखा था।

मरा हुक्म? किसलिए? कुछ समझ नहीं पाया था। सिर्फ यह समझ सका था कि मन्दिर में फूला की भोली को पलटती हुई वह जब जमीन का हाथ सँ छूती थी, तो उसकी हथेली मरे परो का छू रहा सी लगती थी। यह भुलावा नहीं था।

क्या पूरन इस जन्म में भी सुदरा को स्वीकार नहीं करेगा? उसका आँखों में पानी नरा हुआ था, आँखों में भी और भावाज में भा, क्योंकि उसके गन्ध भी गीले से लग रहे थे।

‘मैं पूरन भी नहीं हूँ और राजा का बेटा भी नहीं,’ सिर्फ इतना ही कहा था। हैरान था—पत्थर की दरार में से निकले घाम व तिनक वाली बात आड़ूओ के पेट का पता लग गई थी पर सुदरा का क्या पता नहा लगा था?

मंदिर में पूजा के समय जब वह फूलों की भोली का पलटता था उसका बाह फूलों के ढेर में एक सापिन की तरह पड़ी हुई लगती थी, और वह मरे पर का जब उगलिया था हथेली छुमाती थी, पर भूबिछन सा हुआ लगता था—पर भाज ने उसके डक को अकारण बर दिया है। मला घास के तृण का भी कभी किसी साप का जहर चढ़ता है? मुझे उसका बात का जहर नहीं बन सकता

“मेरी आत्मा ..” वह कुछ ऐसी बात कहने लगी थी, मैं परे उससे दूर-सा होकर खड़ा हो गया । आत्मा और पुण्यात्मा वाली कहानी जो महत किरपासागर जी ने सुनाई थी, वही बहुत थी, इस कहानी को फिर आज सुन्दरा से सुनना नहीं चाहता था ।

“मेरे पत्थर के देवता...” उसने वही दूर से कहा, और फिर जल्दी से चली गई ।

सुन्दरा बावली है, रो पड़ी थी, पता नहीं उसने आड़ुओ के पेड़ों की तरफ क्यों नहीं देखा—वह अगर देखती, तो उसे वह भेद मालूम हो जाता कि उस पेड़ के सारे फूल सिर्फ मुझपर हसने के लिए खिलते थे...

पिछले कई सालों में मैं कभी आड़ुओ के पेड़ के नीचे नहीं खड़ा हुआ था, आज बड़ी देर तक खड़ा रहा, लगा आज जरूर खड़ा होना था, और देखना था कि आखिर उसके फूल मुझपर कितना हस सकते हैं...

ग्यारह

आड़ुओ के गुलाबी फूलों की हसी, और सुन्दरा की काली स्याह आँखों के आसू अजीब तरह एक-दूसरे में मिल-जुल गए हैं । शायद यह हसी बीज की तरह है, जिसे घरती में बोकर यह आसू पानी दे रहे हैं ... या आंसू गोल बीज की तरह है जिसे घरती में बीज कर यह हसी पानी दे रही है ..

एक अजीब-सी हमदर्दी मेरे मन में उग आई है—मा को तो भगवान् ने सपने में दर्शन दिए, भगवान् की तरफ से उसे एक सयोग का हुक्म मिला, महत किरपासागर जी ने भगवान् का हुक्म मान लिया, और दोनों ने मिलकर कुछ प्राप्त कर लिया । पर वह तीसरा आदमी .

जो मेरी मा का पति है पर मेरा बाप नहीं उस बेचारे ने क्या प्राप्त किया सिफ एक भुलावा कि मैं उसका बेटा हूँ चाह उसके आगन में नहीं खेला चाहे उसके खेतों में उसका हल नहीं चलाया, पर उसके बग का चिराग हूँ

क्या चिराग जसा गंद भी इतना काला और अधियारा हा सकता है

लगता है—मा ने एक अधेरा चुराया, जब तक अधेरे का अपनी कोख में छुपा सकती थी छुपाये रखा। फिर जब छुपाया न गया, उसकी एक पोटली बांधकर उस गरीब आदमी के सामने जा रखी—देख ! मैं तेरे घर का चिराग दूढ़कर लाई हूँ।

चिराग क्या होता है—मिट्टी की एक कटोरी सी थोड़ा सा तेल थोड़ी सी रुई। वह तो धा ही। सिफ आग नहा थी। आग एक सच्चाई हानी है पर झूठ भी शायद सच्चाई की तरह बलवान् होता है और वह भी अपने हाथों की रगड़ में से आग की चिंगारी पदा कर सकता है

चिराग जल गया। पर एक फक मैं देख सकता हूँ—इस चिराग की रोगनी में जो राह नजर आती है उस राह पर एक भयानक खामोशी है और एक मयानक एकाकीपन।

इस चिराग से जिनका भी सम्बन्ध है सब उस राह पर चल रहे हैं पर सब एक दूसरे से अपनी आखों को चुराते हुए और अपने अस्तित्व को भी चुराते हुए सब एक दूसरे से दूरे हुए और अपने अपने एकाकीपन का भोगत हुए

हमदर्दी जैसे गंद को मा के साथ जाडना भी चाहता मा भी नहीं जुडता। महत किरपासागर जी के साथ भी नहीं जुडता। सिफ कुछ जुडता है—तो उस बेचारे आदमी के साथ जो दुनिया की नजर में मरा बाप है।

वाप शब्द से ख्याल आया है कि अगर मैं इस शब्द को उस बेचारे आदमी पर से उतार दू—(मुझे लगता है इस शब्द को उसने एक गठरी की तरह उठाया हुआ है)—और इस शब्द का भार मैं महत किरपा-सागर जी के सिर पर रख दू, फिर ?

पर अब वह भी नहीं हो सकता । अगर महत किरपासागर जी जीवित होते, तो मैं शायद किसी दिन यह कर देता । पर अब यह भार मैं उनकी लाश के सिर पर कैसे रख दू ?

आज सुबह मन्दिर के कार्यों से निवटकर, मेरे पैर जबरदस्ती उस खेत की तरफ चल पड़े थे, जहाँ वह 'बेचारा' आदमी हल चला रहा था । पता नहीं, उसने क्या समझा होगा, पर मैंने उसके हाथ से उसका काम पकड़ लिया था । सूरज जब तक शिखर पर नहीं आया था, मैं उसके खेतों में उसके एक मजदूर की तरह लग रहा था...उसके काम का बोझ हलका नहीं कर रहा था, सोच रहा था, शायद ऐसे ही उसके सिर पर उठाये हुए शब्द का भार कुछ हल्का हो जाए...

उसका मुझे पता नहीं, पर मेरा अपना आप कुछ हल्का-सा हो गया है—खेत के पास बहते पानी में जब मैंने अपने हाथ धोए थे, लग रहा था—बदन से कुछ धोया जा रहा था । कन्धे की चादर से जब माथे का पसीना पोछा था, लग रहा था—लेस की तरह लगे हुए एक रिश्ते का कुछ हिस्सा मैंने आज पोछ दिया था...

अगर मैं रोज इसी तरह कुछ पोछता रहूँ, तो शायद किसी दिन सब कुछ पोछ दिया जाएगा ..

हे भगवान् ..

मैंने यह सोचा ही नहीं कि अगर मैं रोज उसके खेत में जाकर उसकी गोड़ाई या जुताई करूँगा, तो गाव वाले रोज देखेंगे, और तब लेस की तरह लगा हुआ यह रिश्ता दिनो-दिन छूटेगा या और पक्का

सुदरा नही जानती, पर यह भी एक रिश्ता है
 वही रिश्ता जो हवन कुण्ड के साथ होता है
 मैं कुण्ड हूँ, पाराशर स्मृति के अनुसार पति के जीते जो जो स्त्री किसी
 घोर से सत्तान लेती है उस सत्तान का नाम कुंड होता है
 किसी कुण्ड में जो कुछ पड़े वह दग्ध हो जाता है
 मुझे प्यार करके सुदरा अपना हवन करना चाहती थी। वह नहीं
 जानती पर मैंने उसे हवन की सामग्री होने से बचाया है

तेरह

मा औरत के रूप में होती है पृथ्वी के रूप में भी। विष्णुपुराण में
 कहा जाती है कि विष्णु ने जब वराह का रूप धारण किया तो पृथ्वी ने
 उसके साथ भोग करके नरक नामक पुत्र पदा किया।

सो यह कहानी मिफ मेरी नहीं, आदि युगादि की है।

और आदि युगादि से यह नरक पदा होते रहे हैं।

भाग करने वाला वा क्या है उनका खेल उनको नहीं भुगतना
 पड़ता यह मिफ नरको का भुगतना पड़ता है। यह सिफ मुझे भुगतना
 है

आज सुबह मा जब भिंदर में आई थी साच रहा था, उसको प्रणाम
 करूँ। बिल्कुल इस तरह जिस तरह कोई पृथ्वी को प्रणाम करता
 है।

पृथ्वी ने जब नरक पदा किया था, तो किसी ने भी पृथ्वी का
 निरादर नहीं किया था, सो मुझे भी उसका निरादर करने का क्या हक
 है ?

मेरी मां साक्षात् पृथ्वी है ।

मुलफा बहुत अच्छी चीज़ है । मैंने आज तक नहीं पिया था । गोविन्द साधु के हाथों से चिलम पकड़कर आज मैंने थोड़ा-सा ही पिया कि आनन्द आ गया । अजीब-अजीब बातें भी सूझ रही हैं...

अभी चरपट योगी की कथा याद आई है कि चरपट योगी का जन्म योगी मछेन्द्रनाथ की दृष्टि से हुआ था—भोग से नहीं, सिर्फ दृष्टि से ।

और क्या पता मेरा जन्म भी महन्त किरपासागर जी की सिर्फ दृष्टि से हुआ हो...

लगता है, महन्त किरपासागर जी भी योगी मछेन्द्रनाथ की तरह सिद्ध पुरुष थे । सो सिद्ध पुरुषों को प्रणाम करना चाहिए...

मुझे अफसोस है कि मैंने महन्त किरपासागर जी को कभी जीते जी ऐसे प्रणाम नहीं किया था । चरपट योगी ने मछेन्द्रनाथ को ज़रूर प्रणाम किया होगा । मुझे चरपट योगी से यह शिक्षा लेनी चाहिए थी...

चरपट योगी मेरे बड़े भाई की जगह है...पता नहीं यह ख्याल पहले क्यों नहीं आया ..उसका जन्म भी ऐसे हुआ था, जैसे मेरा...सो हम भाई-भाई है ..आज मैं बहुत खुश हूँ...आज इतिहास के पन्नों में से मुझे मेरा भाई मिल गया है .

गोविन्द साधु पता नहीं कहाँ अलोप हो गया है । अभी नागफनी की झाड़ी के पास बैठा चिलम पी रहा था । कहीं साईं भगत राम ही दिख पड़े तो कहूँ कि चिलम मेरे लिए भी भर ला । चिलम के दो घूंट से ही आनन्द आ गया...

आनन्द की तृप्णा भी अजीब चीज़ है...यह मैं किस तरह बैठा हुआ हूँ, किस मुद्रा में ? ओह, याद आया—यह भद्रा मुद्रा है । टखनों को मोड़-

वर अपने नीचे रखकर बैठने की मुद्रा। योगियों का आसन

पता नहीं मेरे नीचे क्या बिछा हुआ है मरु ख्याल है भद्रासन होगा बहुत सस्त है भद्रासन होता ही सग्न है धूल का चमड़ा इस आसन पर बैठने वाले लोगो की भलाई के लिए बैठते है लोगो के कल्याण के लिए मैं किसका कल्याण करूंगा ? क्या आसन पर बैठने वाले अपना कल्याण नहीं कर सकते ?

एक अजीब बू आ रही है गायद बत के चमड़े की है नहीं यह मेरे जिस्म में से आ रही है हाथों में स बाहों में से छाती में से मछली की बू की तरह मस्तिष्क का वह कौन सी मस्तिष्कादरा ? वह जो वसु राजा के वीर में मछली के पेट में से जन्मी थी ? उसे भी जरूर अपने जिस्म में से मछली की बू आती होगी मेरी मा भी शायद मछली है मैं मछली के उदर से पैदा हुआ हूँ एक दिन महन किया सागर जी समाधि में लीन थे पता नहा महाभारत में किसी ने यह क्या क्यों नहीं लिखा

यास ने महाभारत लिखते समय जरूर भाग पी रक्खी होगी नहीं मुलका पा रखा होगा कोई साइ भगतराम उसकी चित्रम भर रहा होगा और वह लिखता गया होगा आज साइ भगतराम ने कमाल की चित्रम भरी है मैं भी महाभारत लिख सकता हूँ

महाभारत का क्या है जो मरजी आए लिखने जाया जहा कुछ समझ न आए बहा जो जा चाहे लिख दा गुरु ब्रह्मा का देटा था पर गुरु की मा नहीं थी वह एस ही पैदा हा गया था । ब्रह्मा एक यज्ञ करवा रहा था बहा देवताओ की बहुत सुंदर पत्निया आई हुई थी ता उनको देनकर ब्रह्मा का वीर गिर गया । धूरज ने उस वीर को इकट्ठा कर लिया और अग्नि में उसका हवन किया । तो उमी वयत अग्नि में स तीन सुंदर बालक निकल आए देवताओ ने एक बालक गिव को दे दिया

खामखाह...एक अग्नि को दे दिया...वह भी खामखाह...और एक उसके असली बाप को दे दिया, ब्रह्मा को, यही बालक शुक्र था...

तो बाप का क्या है, बाप पर कोई दोष नहीं लगता... इसलिए बाप का नाम याद रख लेना चाहिए...दोष सिर्फ मा पर लगता है, सो मा का नाम भूल जाना चाहिए...वच्चे का क्या है, वह कहीं भी पैदा हो सकता है—मछली से भी, पृथ्वी से भी, अग्नि से भी. मैं जब महाभारत लिखूंगा, तो लिखूंगा कि मैं सुलफे की चिलम में से जन्मा था...

खूब वक्त पर खयाल आया है कि वच्चे की पैदाइश के लिए इन्सान का वीर्य भी जरूरी नहीं. पद्मपुराण में लिखा है कि मगल विष्णु के पसीने से पैदा हुआ था...वामनपुराण में लिखा है कि शिव जी के मुह में से एक थूक गिरा और उस थूक में से एक बालक जन्मा था...

सो मैं अपने जन्म की कथा लिखूंगा कि एक दिन महत किरपासागर जी सुलफे की चिलम पी रहे थे. मुह से एक थूक गिरकर चिलम में पड़ गया. और मैं सुलफे के धुएँ की तरह चिलम में से निकल पड़ा.

यह सब सम्भव है... अयोध्या के सूर्यवंशी राजा सगर की रानी सुमति को औरव ऋषि के वर के अनुसार साठ हजार पुत्र पैदा होने थे, ऋषि की वाणी थी, इसलिए सुमति के गर्भ से एक तुम्बा जन्मा, जिसमें साठ हजार बीज थे। राजा ने साठ हजार घी के घड़े भरकर, उनमें एक-एक बीज रख दिया—दस महीने बाद हर घड़े में से एक-एक बालक निकल आया.

यह हरिवंशपुराण की कथा है, इसलिए सच है। सच किसी काल में भी हो सकता है। इस काल में यह भी सच है कि एक दिन महत किरपासागर जी सुलफे की चिलम पी रहे थे, मुह में से एक थूक गिरकर चिलम में पड़ गया, और एक बालक, सुलफे के धुएँ की तरह चिलम में से निकल पड़ा.

यह कैसा ज्ञान है जो मुझे प्राप्त हो रहा है...

भुशुडि नाम के एक ब्राह्मण को जब सोमश ऋषि ने थाप दिया था तो उसके श्राप से वह एक कौमा बन गया था, पर कौमा बनते ही उसको एक ज्ञान प्राप्त हो गया था और फिर वह चिरजीवी होकर सब ऋषियों को ज्ञान सुनाता रहा

मैं भी शायद उसकी तरह नागभुशुडि हूँ मुझे भी एक ज्ञान प्राप्त हुआ है मैं भी समय का एक ज्ञान सुना रहा हूँ

चौदह

सुना—मा बहुत बीमार है। कुछ दिना से मन्दिर में देखी नहीं थी। कुछ ऐसा ही ख्याल आया था पर जिस बात की खबर लेना कहते हैं, उस बात का ख्याल नहीं आया।

आज उमने अपनी किसी पड़ोसिन को भेजा था— एक बार मुह दिखा जा। यह मर बत्तीस दाता में से निकला मिनत है।”

उस वक़्त मैं मन्दिर में खड़ा था शिव और पावती की मूर्ति के पास और लगा यह शब्द सुनकर मैं भी पत्थर की तरह हो गया था—परो को उठाकर चलन की जगह वहाँ पत्थर की तरह हो जाना आसान लगा था।

यह सुबह की बात है। दोपहर के समय वह पड़ोसिन फिर आई थी, 'मरने को पड़ी है, कहती है—एक बार मुह दिखा जा। तुझे मेरे दूध की बत्तीस धारों की सीग'च ।’

बत्तीस दात बत्तीस धारें लगा, उसके पास बत्तीस की गिनती बहुत मारी थी और भवानक ख्याल आया कि स्कन्दपुराण के काशाखण्ड में औरत के बत्तीस गुण लक्षण मान गए हैं

इकतीस के बारे में कुछ नहीं कह सकता पर एक के बारे में जरूर

कह सकता हूँ। वत्तीस में से एक लक्षण निष्कपटता भी है।

सोचा, जाना है, इसलिए जाऊंगा। दूध की वत्तीस धारों का कर्जा लौटाने नहीं, और न ही वत्तीस दांतों में से निकली मिन्नत को सुनकर, सिर्फ एक मन्दिर का साधु होने के नाते, जिसे गांव में से आए किसी मर्द या औरत के बुलावे पर जरूर जाना होता है।

सिर्फ यह ख्याल जरूर आया कि उसने अपने आखिरी वक्त या मुश्किल की घड़ी में, जो मेरे मुह से कोई साधु-वचन सुनना चाहा, तो मैं यह कह सकूंगा, 'भली औरत ! तुझमें औरत के वत्तीस शुभलक्षणों में से शायद इकतीस ही होंगे, पर मैं वत्तीसवें की बात करता हूँ—निष्कपटता की। जिस मर्द के नाम के नीचे तूने सारी जिन्दगी गुजारी है, अगर आखिरी वक्त तू उसके साथ निष्कपटता बरत ले...'

जाते वक्त कोई और ख्याल नहीं आया था। सिर्फ एक ख्याल था, यही ख्याल जो मैं सुलफे की तरह पीता गया था। और एक क्रोध-सा था जो सुलफे के धुएँ की तरह निकल रहा था।

अब आती बार ख्याल आ रहे हैं, यह भी कि सुलफे का जो नशा मेरे सिर को चढ़ा हुआ था—एक दम का नशा था। शायद दम को भी सुलफे की तरह पिया जा सकता है...

और यह ख्याल भी आ रहा है—वत्तीस शुभ लक्षण सिर्फ औरत के ही नहीं होते, मर्द के भी होते हैं। और उन वत्तीस में से एक लक्षण उदारता भी होता है, क्षमा भी। मैंने उसके शुभ लक्षणों की गिनती करके उसको सुना दी, पर यह गिनती मैं अपने लिए भी तो कर सकता था...

क्या उदारता और क्षमा वाला लक्षण मुझमें नहीं होना चाहिए ?

उम्र के बरसों की तोड़ी हुई एक औरत, बड़ी दीन-सी होकर, और हारकर, चारपाई के बान से लगी हुई थी, और मैं परे एक आसन पर चावल के माड़ की तरह अकड़कर बैठ गया था।

बलो, बठ भी गया था, तो चुप ही रहता

उसने मुझे हाथ से छूना चाहा था—बड़कर, पता नहीं पैरो का किसिर को, पर उसका हाथ बीच में ही लटका रह गया था

कुछ भुरियां थीं जा हवा में लटक रही थीं

मास के बलो में पता नहीं कि दगी का क्या कुछ लिपटा होता है

परे आसन पर बठे हुए मुह पर शायद निदयता जसी कोई चीज थी लगा—उसने देग ली थी और उसकी आंखों में पानी भर आया था।

गायन वह सोचनी थी कि आंखों के पानी से वह मरे मुह पर से इस निदयता को धो सकती थी

पर यह मेरे मुह पर जा कुछ भी उसे दिखा था धूल की तरह उड़कर पड़ा हुआ नहीं मास के राम की तरह उगा हुआ है।

वही बात हुई जा मैंने साची था। मरी खामाशी तोड़ने के लिए उसने कहा— मरे लिए कोई बचन।

बचन मैं सोचकर गया था। इसलिए कह दिया—'निष्कपटता।

लगा उसके मुह की सब भुरिया मेरी ओर देखने लगी थी।

उस वक्त कोठरी में वह अकेली थी। मैं था परमरा मनसब है उसका पति उसका दीनानाथ—उम वक्त बाहर घोसारे में था और उसका पाम काठरा में नहीं था।

मैं जानू या मरा परमात्मा। मैं निष्कपट हूँ उसकी बहुत धीमी सा आवाज आई थी।

गुनकर हसी सी आ गई थी।

उसकी आंखों में कुछ फन गया था। गायन सीफ जसी कोई चीज था। वह एकटक मरी तरफ देख रही थी और उसकी आंखों में वह सीफ चीज का तरह चमक पड़ा था। और फिर लगा था—वह सीफ की तरह चटख गया था गायन विप्लव गया था

उसकी आँखों से कुछ पानी पिघले हुए शीशे की तरह वह रहा था ।

उसने खाट की बाही पर छाती का भार डालकर अपनी बाह को लटकाया—मेरे आसन का एक कोना हथेली से छू लिया । आसन का कोना भी, उसके साथ लगा मेरा घुटना भी ।

घुटना जल-सा उठा, एक क्रोध से । हथेली को घुटने से झटक सकता था, पर गुस्से की बड़ी गरम लकीर, घुटने से लेकर जवान तक फैल गई थी, इसलिए जवान तिलमिला गई । कह दिया—“महत किरपासागर जी ने आखिरी वक्त यह ‘निष्कपटता’ मुझे बता दी थी ।”

बहुत साल हुए, एक बार गोविन्द साधु ने एक साप मारा था । उसका डंडा जब साप की कमर में घसा हुआ था, और साप के सिर वाला हिस्सा, और नीचे घड़ वाला हिस्सा दो अलग-अलग हिस्सों में तड़प रहे थे—मैं उसके पास खड़ा, उसको देखता, एक ग्लानि से भर गया था । उस दिन मुझे साप पर नहीं, गोविन्द साधु पर बड़ा गुस्सा आया था । साप तड़प रहा था, गोविन्द साधु तमाशा देख रहा था ।

लगा, मेरी बात सुनकर, वह भी साप की तरह तड़प उठी थी, मेरी बात लकड़ी के एक डंडे की तरह उसकी पीठ में घस गई थी, और जिसके बोझ के नीचे वह गुच्छा हुई अजीब तरह टूट रही थी । अपने आपसे भी एक नफरत हुई । अपने आपसे भी, उस बात से भी, और उस बात की चोट से तड़पती उसकी जान से भी ।

एक मरते हुए इन्सान को मैं कैसी शान्ति दे रहा था ? मुझे पता था, मैं एक बदला ले रहा था, पर यह कैसी घड़ी थी बदला लेने की ?

और सबसे अधिक नफरत अपने आपसे हुई । अपने अस्तित्व से । जैसे मेरा अस्तित्व नफरत का एक टुकड़ा हो...

हिल-मा गया था।

फिर यह छपाल भी घायमा—जो मैं नफरत का एक टुकड़ा था तो मास के इस टुकड़े को जन्म देने वाली मां ? यह एक बच्चे की मा नहीं एक नफरत की मा थी।

और मैं फिर झटोल-मा हा गया।

कोठरी में एक खामोशी छा गई थी।

यह खामोशी गायन बहुत भारी थी पत्थर की गिला का तरह। इसको न मैं हटा सकता था, न वह।

पर मेरा छपाल गनत निकला, उसने खामोशी की गिला ताड़ी और कहा— मुझे पता था एक दिन शुभ्र अग्निकुण्ड में नहाना होगा

मैंने कुछ हैरान होकर उसके मुह की तरफ देखा।

अचानक उसने अपनी मि नत-सी करती हुयेली मेरे घुटने पर स हटा ली। और बड़ी शांत होकर अपनी खटिया पर आराम से लट गई।

अब उसकी आवाज भी बड़ी शांत और झटोल थी। उसने सहज भाव से कहा— कई बार लगता था कि सीता की तरह मुझे भी अग्नि परीक्षा देनी पड़ेगी

लगा—यह बोल महत किरपासागर जी के उन बोला क साथ मिलते थे— तेरी मा एक पुण्यात्मा है उसे कभी दोष न देना स्वयं भगवान् ने सपने में उसे दान दिया

पर यह बाल सायद जान-बूझकर मिलाए गए थे। मुझे कभी भी भगवान् के इन दशनो वाली बात पर विश्वास नहीं हुआ था। और लगा अब मा भी अगले वाक्य में इन दशनो वाली बात का दुहरा देगा

इत्सान अपने किए को अपने हाथ में न पकड़ सके, तो बड़ी सीधी-सी बात है कि वह भगवान् के हाथ में पकड़ा दे

पर उसने कुछ नहीं कहा।

इसलिए मुझे, खुद, कहना पड़ा—“भगवान् ने सपने में दर्शन दिए, सिर्फ यही कहने के लिए ?”

वह सचमुच हम दी, “नहीं, मेरे लाल ! मेरे ऐसे करम कहा थे कि भगवान् मुझे सपने में दर्शन देते, और कुछ कहते ।”

लगा—दर्शन वाली बात महत किरपासागर जी ने मेरे मन को चहकाने के लिए बनाई थी ।

और लगा—एक झूठ था, जो इस कोठरी में पड़ी हुई खटिया पर से रेगता-रेगता, एक मरे हुए इन्सान की समाधि तक पहुंच गया था ।

पर मैं झूठ और सच को नितारना क्यों चाहता था ? अपने पर एक खीझ-सी आई । और लगा अगर यह लोग किसी झूठ पर कुछ खाड-सी लपेटकर मुझे खिलाना चाहते हैं, तो मैं इसे खा क्यों नहीं लेता ? आखिर भगवान् के नाम को खाड की तरह पीसने के लिए, इन बेचारों ने कितना कुछ किया है...

“अग्नि-परीक्षा, कभी किसी पति की आज्ञा थी, आज पुत्र की आज्ञा है. ”

लगा—वह अपने आपसे बातें कर रही थी ।

फिर एक गुस्सा-सा आ गया — झूठ को खिलाना भी जरूर है, पर दूसरे से यह भी कहलवाना है कि यह बहुत मीठा है !

उसने मेरे गुस्से को नहीं जाना, कहती गई—“मेरे ऐसे करम नहीं थे जो भगवान् मुझे दर्शन देते । मैंने सिर्फ उसकी आज्ञा मानी थी, जिसको मैंने सारी उम्र भगवान् समझा । दर्शन उसे हुए थे, मैंने सिर्फ उसकी आज्ञा मानी ।”

दरवाजे के पास खटका-सा हुआ । लगा अब वह बिल्कुल चुप हो जाएगी, क्योंकि अब उसका पति अन्दर कोठरी में आ गया था ।

“हकीम से तेरे लिए एक और पुड़िया लाया हूँ...” उसने कोठरी

ने आते हुए कहा । और कहा, 'हकीम ने कहा है कि आज का दिन कष्ट का है अगर आज का दिन कुशलता से गुजर गया तो "

'हा आज का दिन ही कष्ट का था ' लगा वह हम नी घी और फेर उसने अपनी चारपाई पर से हाथ म दवा की पुडिया लेकर, लडे हुए अपने पति के परो की तरफ अपना हाथ बढ़ाकर कहा — मैं तेरे, अपने भगवान के हाथ म इस दुनिया से चली जाऊ मुझे इससे ज्यादा कुछ नहीं चाहिए एक इस बेटे का मुह देखने के लिए जान अटकी हुई थी वह भी देख लिया अब मुझे शांति मिल गई है और हाथ के इंगारे से उसने पुडिया खाने से इनकार कर दिया ।

गाम का अधेरा उतर आया था । और फिर लगा, वह सो-सी गई थी । मैं उठकर बाहर आ गया ।

बाहर ओसारे म वह सालटेन की चिमनी पोछ रहा था । उसने एक बार मर कंधे पर हाथ रखकर मुझे प्यार-सा किया । लगा हाथ कुछ झिझक-सा रहा था ।

झिझक को समझ सकता था पर हाथ की मेहरबानी को समझ नहीं सकता था । कुछ हैरान होकर उसकी तरफ देखा । लगा वह कुछ कहना चाहता था पर फिर वह बाठरी की तरफ देखकर चुपचाप लानटन की चिमनी पान्त्रने लगा ।

एक म-ट्ट-सा हुआ—जैसे वह सब कुछ जानता था । और मुझसे कहना चाहता था—मैंने क्षमा कर लिया है मैं, एक ग्राम दुनियादार दंगान होकर और तू उसे क्षमा नहीं कर सकता ?

मैंने एक बार अपने बेग का तरफ देखा—सिर स पाव तक मैंने मेरझा भगवान् के नाम वाला बग पहना हुआ था । और लगा उसका सफ- कपडे मरे बग का एक उलाहना-सा दे रहे थे

एक बार फिर पलटकर देखा—वह ओसारे मे सड़ा एक सफेद

पड़े के टुकड़े से अब भी लालटेन की चिमनी पोछ रहा था। चिमनी
नहीं कब की धुआई हुई थी, या कोई काला-सा घब्बा चिमनी पर
उतर नहीं रहा था...

पंद्रह

यह कैसा अघेरा है, कही खत्म ही नहीं होता...

कोख का अघेरा हर कोई भेलता है। पर उसका एक गिना-चुना
समय होता है। और वह जैसे-तैसे गुजर जाता है। पर मेरा यह अघेरा
गुजरता क्यों नहीं? क्या समय मुझे अघेरे की कोख में डालकर फिर
निकालना भूल गया है? और मुझे, अघेरे की कोख में पड़े हुए ही बरस
पर बरस गुजरते जा रहे हैं?

साईं भगतराम एक दिन एक मूर्ख पंडित की कथा सुना रहा था—
कि एक गांव की स्त्रिया जब एक पंडित से तिथि-त्यौहार पूछने जाती—
और मूर्ख पंडित से जन्मी न पड़ी जाती, तो वह बहुत कच्चा पड़
जाता। आखिर उसने सोच-सोचकर एक उपाय ढूँढा। मिट्टी की एक
कुलिया रख ली, और पडवा का दिन पूछ-पुछाकर, उसने अपनी
बकरी की एक मेगनी उस कुलिया में डाल दी। दूसरे दिन एक और मेगनी
डाल दी, तीसरे दिन एक और। इस तरह रोज एक मेगनी वह याद से
उस कुलिया में डाल देता। जब कोई स्त्री तिथि पूछने आती, वह कुलिया
की मेगनी गिनता, और उसके मुताबिक बता देता कि उस दिन क्या
तिथि थी। कुलिया में एक मेगनी होती तो पडवा होती, दो होती तो
दूज, तीन होती तो तीज... सो काम चलता गया। पर एक दिन
पंडित जी की कुलिया कही आगन में पड़ी रह गई, और आगन में खड़ी

बकरी न जब भेगनी की ता कुलिया मुह तक भर गई। अगले दिन एक स्त्री तिथि पूछने आई, पंडित ने कुलिया देखी, तो भगनियों की गिनती ही न हा। स्त्री ने स्वयं ही कहा 'होनी तो आज नौमी है।' पंडित जी ने भी उस समय टालने के लिए कह दिया है तो नौमी पर अपार नौमी है।

मन की हालत रघामी सी है। पर यह हास्यास्पद बात याद आ गई है। लगता है, समय भी एक मृग पंडित है। मेरी बारी अबेरे दिना की गिनती करता हुआ अपनी कुलिया को रात आगन में ही रख गया था—और अब मेरी नौमी का अपार-नौमी कहकर अपनी मूर्खता छुपा रहा है।

अपार अधेरा।

और लगता है—कोख में मेरे निकलकर मैं सीधा मंदिर की गुफा में आ गया हूँ और गुफा पता नहीं कितने सी माल लम्बा है।

हर सवाल अधेरे की उपज होता है—सिर्फ यह बात अलग है कि सवाल छोटा हो तो वह एक बालक की तरह घुटुए घुटुए चलता है और रोता है पर अगर बड़ा हो तो वह बाली दीवारों को हाथों से टटोलता और उनमें सिर पटकता है

काल के अधेर में मैंने सिर्फ हाथ पर ही भारे हाथों में ता घुटुए चलता भी गुफा के अधेरे में सीखा था और अब मेरे माथे की जवाना गुफा की दीवारों से मिर मार रही है

अधेरा उसी तरह है—सिर्फ सवाल बड़े हो गए हैं—मेरे भगना का तरह

सोलह

आज गले में पहना हुआ ढीला-सा चोला भी मेरे अगो में फसता-सा लग रहा था...

अगो की गोलाइयो मे जैसे कुछ नोके निकल आई हो...

कई वरस हुए, जब एक स्कूल में पढता था, एक दिन मेरा एक सहपाठी लडका हसी-खेल मे मुझे एक लारी मे बिठाकर पठानकोट ले गया था ।

पठानकोट के खुले बाजारो में नही, सकरी गलियो मे । और वहा उन गलियो मे औरते ही औरते थी—छोटी-छोटी चादी की मुरकिया पहने, स्कूल मे पढती लडकियो जैसी भी, और होठो पर ददासा मलकर बैठी हुई बडी-बडी स्त्रिया भी, और दहलीजो मे बैठकर हुक्का पीती बडी-बूढिया भी ।

कही कोई मर्द नही था । जैसे छोटी स्त्रियो को बडी स्त्रियो ने आप ही जन्म दिया हो ।

हम दोनो लडके, स्कूल मे पढती उम्र के, वहा खोए-खोए-से लगते थे—या गुल्ली-डंडा खेलते अपनी खोई हुई गुल्ली को ढूढते-ढूढते, वहा, उन गलियो मे पहुच गए लगते थे ।

बूढी स्त्रिया हुक्के की गुडगुड की तरह मुझे हसती लगी थी । अभी यह खैर थी कि मेरे साथी ने लारी मे चढने से पहले मेरे गेरुए चोले को गले मे से उतरवाकर अपनी एक कमीज और एक सफेद पजामा मुझे पहना दिया था । उसका बन्दोबस्त वह पहले ही करके आया था । सुबह घर से आते समय दोनो कपडे अपने बस्ते मे डाल लाया था ।

वह उन औरतो का कुछ वाकिफ भी लगता था । एक-दो को उसने “मा, राम सत” भी कही थी ।

वर्द बार यह भी सोचना चाहा कि यह मैं नहीं था, मरे दोस्त का सिर्फ कमीज-पजामा था जो लारी में बैठकर वहाँ गया था, पर वह कमीज पजामा गले से उतारकर भा सारे कुछ का दोष गले से नहीं उतार सका था ।

फिर यह भी सोचना चाहा था कि इसमें इतना दोष नहीं था । दोष सिर्फ सस्कारा में था । तो भी इसको दोहराने का कभी ख्याल नहीं आया था ।

यह ख्याल सिर्फ आज आया था । आज गले में पहना हुआ ढीला चोला भी अगो से अटकता लग रहा था । अगो का गालाइया में जैसे कुछ नोकें निकल आई हो ।

और मुझे लगा—आज मेरी हड्डिया किसी बीराय हुए बल के सींगों की तरह तनी हुई है जो किसीके पहलू में घसना चाहती थी

गाव से बहुत दूर जाकर गेहूँ चोले को उतार दिया । कपड़े की एक पोटली सी बांधकर साथ ले गया था—चारियों वाला पजामा लकीरो वाली कमीज और सिर पर लेपेटने के लिए एक लम्बा-सा अगोछा

मेघ बदल गया । लारी में बैठकर सोचा कि वह मैं नहीं था, वह एक मेघ लारी में बठा हुआ था

पर वहाँ पहुँचकर किसी सफरी गली की तंग कोठरी में बैठकर, जब किसी लाल या काशनी रंग में डूबना चाहा उसके किनारे पर ही पैर अड गए ।

अगो का सारा तनाव जैसे अगो से निकलकर परो में आ गया था ।

पर जमकर खड़े हो गए ।

परो को देखना चाहा, दिखे नहीं । वह काल्पनिक भूला के ढेर में छुपे

हुए थे ।

“तू यह फूल क्यों लाई है ?” शायद मैंने बहुत गुस्से से कहा था ।

कोठरी में से एक सहमी-सी आवाज़ आई थी—“फूल कहा है ? यहां कोई फूल नहीं । मैं कोई फूल नहीं लाई हू ।”

पर वहां फूलों का एक ढेर लगा हुआ था—इतना बड़ा कि मेरे दोनों पैर उसमें डूबे हुए थे । मैं न अपने पैरों को देख सकता था, न हिला सकता था ।

किसीने उस कोठरी में मेरी सहायता भी करनी चाही थी, मेरी बाह पकड़कर मुझे वहां से हिलाना चाहा था, शायद बैठाना चाहा था, शायद कहीं ले जाना चाहा था...

पर दोनों पैरों के ऊपर कोई हथेलिया भी छू रही थी...

और पैर उन हथेलियों की छुन्न से शायद मूर्च्छित हो गए थे...

मूर्च्छित पैरों को शायद आगे नहीं बढ़ा सकता था, पर पीछे घसीट सकता था ।

घसीट-घसाटकर फिर अपने डेरे में लौट आया हूँ ।

अगो की गोलाईयो से सभी नोके झड़ गई हैं और मेरा गेरुआ चोला सहमकर मेरे गले से लगा हुआ है ।

सारा बदन सूखा है—किसी रंग में नहीं डूबा । और शायद इस सूखेपन को पवित्रता कहते हैं...

पर पैर सीले हैं । शायद बहुत देर गीले फूलों के ढेर में पड़े रहे थे इसलिए ।

या शायद पैरों की आखों में आसू आ गए हैं...

सुन्दरा...सुन्दरा...जादूगरनी ! आज तूने यह मेरे साथ क

किया है ?

यह क्या मेरी देह से बाहर है पर फिर भी मेरी देह के अन्दर है

स्कंदपुराण में क्या आती है कि सूरज की एक पुत्री छाया के गम से पदा हुद । क्या सूरज के भोग के समय भी छाया का अस्तित्व कायम रहा था ? जरूर रहा होगा, नहीं तो उसका नाम छाया कैसे होता ।

तो सूरज के सम्मुख हाकर भी छाया का अस्तित्व सम्भव है ? मैंने सुन्त्रा को त्यागा था, पर उसका अस्तित्व इस त्याग के सामने भा खड़ा है

बुद्ध रिक्त कैसे हात हैं जा हर हाल में रहते हैं । स्वीकृति में जन्मते काममें रहते ठीक था । पर यह अस्वीकृति में स भ्रा जन्म ले लेते हैं, और सिर्फ जन्म नहीं लेते, इंसान को उम्र के साथ भी जीते हैं और उम्र के बाद भी जीते हैं

ब्रह्मवदन पुराण का एक कथा याद आई है—विष्णु का शलघूट की स्त्री तुलसी का सत भग करना था, इसलिए एक दिन उसने शलघूट का रूप धारण किया और तुलसी के साथ भोग किया । तुलसी का जब इस छन का पता लगा उसने विष्णु का शाप लिया कि वह पत्थर हो जाएगा । विष्णु ने भी उस शाप लिया कि उसके मिर के बाल तुलसी का पोषा बन जाएंगे । और उसका शरीर गड़का नन्ही बन जाएगा । गड़का नन्ही में स अब तक जा पत्थर मिलते हैं व विष्णु का रूप है—शालग्राम । वह रिस्ता अब तक काममें है । महा तक कि लोग कार्तिक का अमावस का तुलसी की पूजा करते तुलसी के पीछे का और शालग्राम का विवाह रचाने हैं

यह कैसे शाप से जिन्होंने वर का रूप धारण कर लिया ? सुन्त्रा का त्याग पता नहीं वर था कि शाप । पर जा बुद्ध भी था वह कायम

है। मेरी देह से बाहर है, पर फिर भी मेरी देह के अन्दर है...

शायद वरदान और शाप भी सूरज और छाया की तरह एक ही समय, एक ही जगह, इकट्ठे रह सकते हैं...

पृथ्वी का नाम, जिस राजा पृथु के नाम से पड़ा, उसका जन्म उसके मरे हुए पिता वेणु की दाईं जाघ में से हुआ था—वेणु धार्मिक राजा नहीं था, इसलिए ऋषियों ने कुश के तिनको से मार-मारकर उसे मार दिया, पर राज-काज के लिए आखिर किसी की जरूरत थी, इसलिए मरे हुए वेणु की एक जांघ को मलना शुरू किया। पर उस जाघ में से जिस बालक ने जन्म लिया वह बहुत भयानक शक्ल का था, उसको राज्य नहीं सौंपा जा सकता था। इसलिए ऋषियों ने फिर मरे हुए राजा की दाईं जाघ को मलना शुरू किया। इस दाईं जाघ में से एक प्रकाश से चमकते बालक ने जन्म लिया, वही बालक पृथु था...

इन्सान की एक जाघ में यदि भयानकता वास करती है तो दूसरी जाघ में अनन्त सौन्दर्य। खून के एक ही चक्कर में वर भी, शाप भी... सुन्दरा कहीं नहीं, पर है...

सत्रह

मन्दिर के पास वाले जंगल के पिछवाड़े वाली खड्ड आज घुघ से नाको-नाक भरी हुई है। घुघ इतनी गाढी और जमी हुई लगती है, लगता है—अगर मैं उसपर पैर रखकर चलूँ, तो अडोल खड्ड के परली तरफ झुक सकता हूँ।

पेड़ों की काली, नीली और हरी परछाइयाँ खड्ड की घुघ पर बड़ी स्थिरता से लेटी हुई हैं। सिर्फ किसी-किसी वक्त हिलती और करवट

लेती सी लगती हैं ।

पिछले दिना एक यात्री यहा आया था । पता नही कौन था, सिफ एक रात का बसरा करके आगे कुल्छु की पहाडियों की तरफ चला गया । कहता था फिर वापसी पर आऊगा । अभी आया नहीं, पर आएगा, क्योंकि भार हल्का करने के लिए कित्तौबी का एक गठुर अमानत छोड गया है ।

सिफ वही नही अपनी याद भी छोड गया है आज बार बार उसकी याद आ रही है ।

जिस दिन आया था उस दिन दूर पास कहीं घुघ नही थी पर अब मैंने उसे पूछा कि वह किस शहर से आया था तो उसने हसकर कहा था, घुघ वाला शहर से ।

पूछा था कि वह शहर कहा है तो हस पडा था, 'हर शहर घुघ वाला शहर है,' और उसने खरा ठहरकर कहा था 'हमारी दुनिया में वह कौन सा शहर है जो घुघ वाला शहर नहीं ।'

मैंने चारों तरफ देखा था और दूर घोलोपार की पहाडिया की तरफ भी । वह मेरे प्रश्न को समझकर हस पडा था और उसने कहा था — पत्यर हर जगह दिखत है पर इस घुघ में इंसान का इंसान का मुह नहीं दिखता ।

मैंने एक बार उसकी तरफ देखा था । फिर अपनी तरफ । उसे पूछ रहा हाऊ—'क्या तुम्हे मेरा मुह नहीं दिखता ?'

वह कुछ दूर चुप रहा था, फिर धीरे से उसने कहा था—'जा मैं यह कहूँ कि तुम्हे तेरा मुह नही दिखता, सिफ तेरा जोगिया बग दिखता है फिर ?'

तुम्हे यह खालब नही था कि मेरा मुह उसे दिखे, और इस मुह के पीछे 'धै' हू वह भी उसको नजर आऊ इसलिए मैंने भी हसकर कह

दिया, “चलो, मुह की पहचान न सही, जोगिये वेश की ही सही, क्या यह पहचान के लिए काफी नहीं है ?”

“जिस हिसाब से दुनिया चल रही है, उस हिसाब से काफी, है” उसने कहा था, और वरामदे के एक कोने में कम्बल बिछाकर चुपचाप लेट गया था ।

शाम का हल्का-सा अधेरा था, देख सकता था कि अभी वह सोया नहीं था । उसके हाथ के पास एक दीया, और पानी का कटोरा रखकर, एक बार गौर से उसके मुह की तरफ देखा था । मुह के बारे में कुछ और नहीं सोच रहा था, सिर्फ यह कि आज तक के देखे हुए चेहरों में वह कुछ अलग-सा लग रहा था, और उसे कुछ घड़ियों के लिए मैं अपने ध्यान में रखना चाहता था—जैसे कोई विलक्षण फूल तोड़कर कुछ घड़ियों के लिए उसे अपने सिरहाने के पास रख ले ।

पीठ मोड़ने लगा था, जिस वक्त उसने कहा था, “जोगिये वेश वाली बात का गुस्सा मत करना दोस्त ।”

हसी आ गई थी, इसलिए जवाब दिया था, “जोगिये वेश को तो गुस्सा शोभा नहीं देता,” पर साथ ही ध्यान आया था कि वह ऋषियों की जवान ही होती थी, जो बात-बात में क्रोधित हो उठती थी और शाप दे देती थी ।

इसलिए एक गहरा सास लेकर यह भी कह दिया, “क्रोध करेगा तो जोगिया वेश क्रोध करेगा, मैं क्यों करूँगा ?”

वह कधो पर तानी हुई गर्म चादर को, हाथ से परे करके, कम्बल पर बैठ गया, और कहने लगा—“यह बात तूने बढिया कही है । खुश होते हैं तो वेश ही खुश होते हैं, क्रोध करते हैं तो वेश ही क्रोध करते हैं, इन्सान है ही कहा ? अगर कही है भी, तो मुझे तो धुंध में दिखते नहीं...”

फिर वह खिलखिलाकर हस पड़ा और कहने लगा—“सारी दुनिया

सती सी लगती हैं ।

पिछने दिना एक यात्री यहा आया था । पता नही कौन था, सिफ एक रात का बसेरा बरके आगे कुल्लू की पहाडियों की तरफ चला गया । कहता था फिर वापसी पर आऊगा । अभी आया नहीं पर आएगा, क्योंकि भार हल्का करने के लिए किताबों का एक गट्टर अमानत छोड़ गया है ।

मिफ वही नहीं अपनी याद भी छोड़ गया है, आज बार बार उसकी याद आ रही है ।

जिस दिन आया था, उस दिन दूर-वास कहीं धुध नहीं था पर जब मैंने उसे पूछा कि वह किस गहर से आया था, तो उसने हमकर कहा था, 'धुध वाला शहर स ।

पूछा था कि वह गहर कहा है तो हस पड़ा था 'हर गहर धुध वाला गहर है' और उसने चरा ठहरकर कहा था, 'हमारी दुनिया म वह कौन सा शहर है जो धुध वाला गहर नहीं ।'

मैंने चारा तरफ देखा था और दूर घौनाधार की पहाडिया की तरफ भी । वह भरे प्रदन को समझकर हस पड़ा था और उसने कहा था — परधर हर जगह निवत हैं पर इस धुध म इंसान का इंसान का मुह नहीं दिखता ।

मैंने एक बार उसकी तरफ दखा था । फिर अपनी तरफ । उसे पूछ रहा हाऊ—'क्या तुम्हे मेरा मुह नहीं निखता ?

यह कुछ दर घुप रहा था फिर धीरे स उसने कहा था—'जा मैं यह कहूँ कि तुम्हे तरा मुह नहीं दिखता, सिफ तरा जोगिया का दिखता है फिर ?

तुम्हे यह सालख नहीं था कि मरा मुह उस दिने और इस मुह के पीछे मैं हू वह भी उसको नजर आऊ, इसलिए मैंने भी हसकर कह

या, “चलो, मुह की पहचान न सही, जोगिये वेश की ही सही, क्या यह पहचान के लिए काफी नहीं है ?”

“जिस हिसाब से दुनिया चल रही है, उस हिसाब से काफी, है” उसने कहा था, और वरामदे के एक कोने में कम्बल बिछाकर चुपचाप लेट गया था।

शाम का हल्का-सा अंधेरा था, देख सकता था कि अभी वह सोया नहीं था। उसके हाथ के पास एक दीया, और पानी का कटोरा रखकर, एक बार गौर से उसके मुह की तरफ देखा था। मुह के बारे में कुछ और नहीं सोच रहा था, सिर्फ यह कि आज तक के देखे हुए चेहरों में वह कुछ प्रलग-सा लग रहा था, और उसे कुछ घड़ियों के लिए, मैं अपने ध्यान में रखना चाहता था—जैसे कोई विलक्षण फूल तोड़कर कुछ घड़ियों के लिए उसे अपने सिरहाने के पास रख ले।

पीठ मोड़ने लगा था, जिस वक्त उसने कहा था, “जोगिये वेश वाली बात का गुस्सा मत करना दोस्त।”

हसी आ गई थी, इसलिए जवाब दिया था, “जोगिये वेश को तो गुस्सा शोभा नहीं देता,” पर माथ ही ध्यान आया था कि वह ऋषियों की जवान ही होती थी, जो बात-बात में क्रोधित हो उठती थी और शाप दे देती थी।

इसलिए एक गहरा सास लेकर यह भी कह दिया, “क्रोध करेगा तो जोगिया वेश क्रोध करेगा, मैं क्यों करूंगा ?”

वह कंधों पर तानी हुई गर्म चादर को, हाथ से परे करके, कम्बल पर बैठ गया, और कहने लगा—“यह बात तूने बढ़िया कही है। खुश होते हैं तो वेश ही खुश होते हैं, क्रोध करते हैं तो वेश ही क्रोध करते हैं, इन्सान है ही कहा ? अगर कही है भी, तो मुझे तो घुघ में दिखते नहीं...”

फिर वह खिलखिलाकर हंस पड़ा और कहने लगा—“सारी दुनिया

कपडा में बटी हुई है, वेशा में—फटे हुए धीपडा वाले, बाम-बाजी मजदूर, भयमैले कपडों वाले, छोटे छोटे दुकानदार, घमकते कपडों वाले बड़े-बड़े दुनियादार " और मेरा हाथ पकड़कर मुझे भी अपने बम्बल पर बिठाते हुए कहने लगा, 'और किमत्ताब पहनने वाले राजा और मंत्री, इस लोक के रसक और गेहए बेगो वाले परलोक के रसक ।'

मेरे कंधे पर उसने ज़ार से एक हाथ मारा, और फिर कहा "और ता और, धरती के टुकड़े भी वेशा से ही पहचाने जाते हैं—अपने अपने झण्डा से । और उन धरती के टुकड़े की रखवाली भी इंसान नहीं करते, बर्निया करती हैं । अगर इंसान कही होते, तो लडाइयों की क्या ज़रूरत थी । मला कहीं सचमुच का इंसान भी सचमुच का इंसान को मार सकता है ? यह सब बर्दियों और वेशा की लड़ाई है झण्डों की लड़ाई

" उस एक सांस सी चढ़ गई थी । जैसे सांस बहुत बड़ी थी और छाती बहुत छोटी थी । और लग रहा था—कपडों का वेश तो क्या, उसकी रूह को उसके बदन का वेश भी लग लग रहा था

"तू कोई भगवान् को पहचान हुआ इंसान लगता है," मैंने उसकी पीठ पर अपनी सी मारी थी, और उसके कंधा से उतरी हुई बादर उसके कंधों पर ओगल दी थी ।

वह हसा नहीं, बल्कि कुछ उदासीन-सा हो गया । और कहने लगा, 'भगवान् के पास तो किसी पुस्तक के वक्त पढ़ने लगे । पहले अपने आपके पास पढ़ने लें । इस घुष में भगवान् तो क्या दिखना है अभी किसी को अपना मुह भी नहीं दिखता

कुछ कहने के लिए मचल-सा गया था । मैं नहीं, शायद मेरा गेहमा वेश मचल गया था । पर अपने वेग को मैंने स्वयं ही चुप सा करवाया, और वहां से उठ बैठा ।

सुबह मक्की की रोटी और गुड की ढली, मैंने जब उसको जाते हुए

उसके पल्ले से बाध दी, उसने अपनी गठरी-पोटली को ज़रा हाथ से तोला, और फिर कुछ किताबों का भार उससे हल्का करके, गठरी और पोटली उठा ली।

“यह मेरी अमानत। फिर जब इस राह से गुज़रूंगा, ले लूंगा,” उसने कहा था।

“पर जो कुछ छाती में डाला हुआ है और मस्तक में भी, वह भी तो बहुत भारी है,” मुझे हसी-सी आ गई थी।

“उसे ढोने के लिए ही तो इस शरीर की ज़रूरत है, नहीं तो यह शरीर क्यों सभाले फिरना था।” वहाँ हस पड़ा था।

बहुत-से यात्री आते हैं, जाते हैं। पर जो भी आते हैं, मन्दिर की नदी में से पानी के चुल्लू भरते, जैसे नदी को कुछ रीता ही करते हैं। पर वह जब हंसा था, मुझे लगा—उसकी भरने जैसी हसी नदी के पानी में मिलकर, नदी को और भर गई थी।

कहा कुछ नहीं, सिर्फ़ जाते समय यह पूछा—“इन पुस्तकों को वाचने का हक़ वर्जित तो नहीं?”

उसके, जाते हुए के, पाव पलभर को ठहर गए थे। उसने गौर से मेरे मुह की तरफ़ देखा था—जैसे किसी धुंध तह की में से मेरे मुह को ढूँढ़ रहा हो।

“ज्ञान को धारण करना, शिव जी की तरह गंगा को धारण करने के बराबर है,” उसने कहा और मुस्करा दिया।

“पुराणों में गंगा के बारे में जो भी प्रसंग आते हैं, उनकी जगह, जो तेरा यह कथन प्रसंग बनकर आता तो बहुत अच्छा था।” अनायास ही मेरे मुह से निकला।

“पुराणों में क्या प्रसंग आते हैं?” उसने पूछा।

“कई आते हैं,” मैंने जवाब दिया, “जिनमें से एक यह है कि यह

वामन-अवतार के पैरो का जल है। जब वामन का पर ब्रह्म लोक तक पहुँचा, तब ब्रह्मा ने उसका पर धोकर उस जल को कमण्डल में डाल लिया, और भगीरथ की प्रार्थना पर ब्रह्म लोक से छोड़ दिया। तब जी ने उस जल का जटाग्रो में सभाल लिया और फिर जटा खोलकर उस जल को पृथ्वी पर छोड़ा तो वही जल 'गंगा' कहलाया।

"और ?" उसने फिर पूछा।

और वाल्मीकीय रामायण में बताया है कि हिमालय पर्वत के घर में काक उदर से गंगा और उमा दो बहनें पैदा हुईं। एक बार शिव ने अपना वीर्य गंगा में डाल दिया। गंगा उसे धारण न कर सकी, और गम को फेंककर ब्रह्मा के कमण्डल में जा रही। फिर भगीरथ की प्रार्थना पर कमण्डल में से निकलकर पृथ्वी पर आई

"काफ़ी दिलचस्प कहानियाँ हैं। वह जोर से हँसा, और कहन लगा 'शायद इन कहानियों में ही गंगा को जान का चिह्न कहा गया है "

'गंगा को कि शिव जी के वीर्य को, जिस गंगा धारण न कर सकी ? किसी जान को गम में धारण कर सकना ही तो मुश्किल था

मैंने जब कहा तो हम दोनों इस तरह हँसे, जैसे हम दोनों स्पष्टता और अस्पष्टता के बीच में खड़े बड़े खड़े हुए लग रहे थे।

यह बात भलग है कि दूसरे पल वह चला गया और मैं उसके जाने के बाद भी कितनी ही देर तक वहाँ खड़ा रहा।

उस दिन घुघ नहीं थी, पर भाज मंदिर के पास वाले जंगल के पिछवाड़े वाली खड्ड में घुघ भरी हुई है

वैसे जिस घुघ की बात उसने की थी, वह उस दिन भी थी भाज भी है और शायद हमें गाँगा हाँगी

सिर्फ यह कह सकता हूँ कि भाज घुघ दोहरी है

पर यह दोहरी घुंघ पता नहीं कैसी है—गाढ़ी, सफेद, और बर्फ की तरह जमी हुई—कि पेड़ों की काली, नीली और हरी परछाइयों की तरह। किसी के यहाँ होने की परछाई भी इस पर अडोल पड़ी लगती है...

यह पता नहीं मेरे वजूद की परछाई है, कि उस यात्री के रूप में किसी ज्ञान के वजूद की परछाई...

अठारह

आज लगता है—उस यात्री को मैंने बहुत नज़दीक से देखा है। उसे भी और अपने को भी।

उसकी अमानत किताबों में से एक किताब मैंने पढ़ी, किताब का हर पन्ना जैसे शीशे का एक टुकड़ा था। प्रत्यक्ष अपनी सूरत भी नज़र आती रही, और अपनी कल्पना में पड़ी हुई उस यात्री की सूरत भी।

आम शीशे में और किसी रचना के शीशे में शायद यही अंतर होता है...

किताब वाली कहानी का पात्र जापान का कोई स्कूल मास्टर है, एक दिन अगस्त के महीने में वह अलोप हो जाता है, सबको यही पता है कि वह समुद्र के किनारे छुट्टियाँ मनाने गया है। उस शहर से समुद्र का किनारा सिर्फ आधे दिन के सफर के फामले पर है। और फिर उसकी कोई खबर नहीं मिलती। अखबार के द्वारा भी उसकी पड़ताल होती है, और पुलिस द्वारा भी, पर कोई सुराग नहीं मिलता।

लोगों का सबसे पहला ख्याल ज़िम बात पर जाता है, उस बात का सिरा सिर्फ औरत से जुड़ता है। पर उसकी बीबी लोगों को यकीन

दिलाती है कि लोगो की कल्पना की मोरत कहीं कोई नहीं । इसलिए वह सिरा उस कल्पना से भी खुल जाता है, और सिफ हवा में सटकता रह जाता है ।

इतना-सा सबको पता है कि वह जब समुद्र के सफर के लिए घर से निकला था उसके हाथ में एक खाली बोतल थी, और एक छोटा-सा जाल । कीड़ो की नई किस्मे ढूढने में उस आदमी की दिलचस्पी थी । इसलिए एक खाली बोतल और एक छोटा-सा जाल ही उसके हथियार हो सकते थे ।

और फिर जब गुमशुदा आदमी को खोए हुए सात बरस गुजर जाते हैं तो सिविल कोड के सेक्शन तीस के मुताबिक उसे मर चुका कह दिया जाता है ।

पर मौत के जाने पहचाने ग्र्यों से भलग भी मौत के ग्रथ होत हैं वह समुद्र के पास एक गांव में पहुचकर जब गांव की खरम होता सीमा से आगे बढ़ता है—घरती उसे सफेद सी और बिल्कुल सूखी-सी नजर आती है । वही धीरानगी फिर रेतीली जमीन बन जाती है । पर रेत में समुद्र की गंध मिली होती है इसलिए वह भाये का पसीमा पोंछकर चलता जाता है । फिर एक बहुत ही अकेला-सा गांव उसे दिखता है—धालुआ का कुछ खेती हुई भी दिखती है पर सफेद रेत का प्रसार फिर भी खत्म नहीं होना लगता । और एक अजीब बात यह कि रेत की सड़क कदम-कदम ऊंची होती जाती है—हालांकि समुद्र की तरफ जाती सड़क कदम-कदम नीची होती जानी चाहिए थी । वह एक बार जब में डाला हुआ नक्शा खालकर देखता है राह जाती हुई एक लड़की को कुछ पूछना है, पर जवाब नहीं मिलता । किसी किसी जगह सीपियों के ढेर और मछलिया पकडने के जाल दिखते हैं, वह उनसे भी एक तमन्ही-सी ढूढता है, और चला जाता है । और फिर एक और अजीब

बात कि सड़क के आसपास बने घर सड़क से ऊंचे होने चाहिए थे, पर वह दोनों तरफ सड़क से नीचे है—रेत के अम्बारो में डूबे हुए। और फिर अचानक आती एक उतराई के बाद उसे भागो-भाग समुद्र दिखाई देने लगता है। यहाँ रेतों के टिब्बों पर ही उसे गैर मामूली कीड़े ढूँढ़ने थे।

रेत का हिलता प्रसार उसे बड़ा दिलचस्प लगता है—सरकता, रेंगता, जैसे वह कोई जीती-जागती और बेचैन रूह हो।

रेत उसके पैरों के नीचे भी हिलती है, और उसके पैर चौककर रेत के कानून की ओर देखते हैं...

कुछ बूढ़े आदमी कुछ घबराए हुए—से उसे सरकारी आदमी समझते हैं, पर वह विश्वास दिलाता है, कि वह एक साधारण स्कूल मास्टर है। रात बिताने के लिए वह कोई जगह पूछता है तो एक जना उसे मदद का विश्वास दिलाता है। शाम ढल जाती है। उसे कीड़ों की कोई खास किस्म नहीं मिलती, और वह थककर अपनी तलाश कल पर छोड़ देता है।

रात बिताने के नाम पर उसे सड़क पर से उतरती एक गहरी खाई में बना हुआ एक घर मिलता है। रस्सी की मदद से वह घर की छत पर उतरता है। घर का रास्ता दिखाने आया हुआ बूढ़ा लौट जाता है। वह घर की छत पर ढेर सारी गिरती रेत को देखकर परेशान होता है, पर यह तजरूवा सिर्फ एक रात का सोचकर वह धीरज बाध लेता है।

रस्सी को घर की छत तक लटकाते समय बूढ़े ने आवाज़ दी थी—'नानी, किवाड़ खोलो।' पर यह यात्री घर की दहलीज़ पर जिस औरत को देखता है, उसकी जवानी अभी ढली नहीं होती। हाथ में लालटेन पकड़े वह उसका स्वागत करती है।

“इस कोठरी में एक ही लालटेन है, अगर तू अंधेरे में बैठ सके, तो

में पिछवाड़े बैठकर तेरे लिए कुछ राख लू भोरत कहती है।

‘मैं कुछ खाने से पहले नहाना चाहता हूँ,’ वह जवाब देता है।

भोरत हैरान सी होती है फिर कहती है— जा तू परतो तब इंतजार कर सके नहाने का इंतजाम हो जाएगा।

‘पर मैं यहाँ सिर्फ एक रात रहना है’ वह जवाब देता है भोर हैरान होता है कि भोरत ने उसकी बात मुनी मनमुनी कर दी है।

खाने के लिए उस मछली का मूँप मिलता है, पर भोरत जब उसकी घाली पर बागड की धरती तानती है वह हैरान हाता है तो वह बतानी है कि यहाँ रत इस तरह उड़ती है कि अभी मूँप का प्याला धरती के बिना रेत के कणों से भर जाएगा। भोरत वह बतानी है कि हुवा का दख जा इस बार हो, तो सारी रात उस छन पर से रत उबेरनी पड़ना है नहीं तो दूसरे दिन तक सारी कोठरी रत में दब जा सकता है।

उसका मन पाँची देर में विचरिचा हा जाता है भोरत उड़ती रत उसके गले में, नाक में भोरत घाली में एक तरह का तरह जमने लगती है।

दूसरे दिन सबेर-सबेर बाहर दूर में बहुत ऊँचाई में आवाज आता है, भोरत रस्सी में एक छाली के लिए नहीं दो आगमिया के लिए कुछ खाने का सामान नीचे उतार दिया जाता है। आवाज-म गक उसकी आवाज के आगे रेत के कणों की तरह घूमते हैं पर उसका समझ में कुछ नहीं पड़ता। भोरत लगातार एक पावड़े में दरवाजे के सामने में रत को हटाने में लगा हुई है।

मैं तरा हाथ बगल ? वह भोरत में पूछता है।

पर भोरत जवाब देती है ‘पहले मैं ही तुझे इनका तबमान दूँ ? नहीं पहले मैं नहीं’ वह परेशान हाता है फिर भी उसके हाथ में पावड़ा पकड़कर उसकी मदद करना चाहता है। भोरत कहती है—

“अच्छा, जो तुझे आज ही काम पर लगना है तो तेरे हिस्से का फावड़ा उन्होंने भेज दिया है, वह ले ले।”

“वह कौन ?” अजीब परेशानी है। वह वहा से उल्टे पाव ही चला जाना चाहता है, पर बाहर की सड़क तक पहुंचने के लिए रेत की चढाई किसी तरह भी पार नहीं की जा सकती...

वह रेत का कैदी होकर रह जाता है...

गाव के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए सारी रात रेत को बुहारने का काम जरूरी है, और इस काम के मजदूर सिर्फ रेत बुहारते हैं। और उसके बदले गाव के मुखिया उन्हें सूखी हुई मछली, कुछ आटा और कुछ पानी रस्सियों से उतारकर, उन तक पहुंचा देते हैं ..

“इसका मतलब है कि तुम कुछ लोग सिर्फ रेत बुहारने के लिए जीते हो ?” वह परेशान होकर पूछता है।

“हा, सिर्फ रेत बुहारने के लिए। यह गाव तभी बना रह सकता है। जो हम यह काम छोड़ दे तो दस दिनों में सारा गांव रेत के नीचे दब जाएगा...” औरत बताती है, और उसका दार्शनिक मन सोचता है कि रेत के इस कानून के आगे शायद कुछ भी नहीं हो सकता। बड़ी-बड़ी वादशाहते भी वक्त की रेत में दब जाती है...पर अस्तित्व क्या है ? शायद पानी के अथाह सागर में पानी को बुहार-बुहारकर एक निश्चल स्थान बनाने का यत्न...

उसकी निराशा उसके गले में अटक जाती है, वह रेत की दीवार पर चढ़कर रेत की इस कबर में से निकल जाना चाहता है पर...

इस ‘पर’ का जवाब कहीं नहीं...

“उन्होंने मुझे, यहा, तेरे पास, रेत का कैदी क्यों बनाया ?” वह हारकर कुछ दिनों बाद उस औरत से पूछता है।

“इसलिए कि मैं अकेली थी, यहां मुझे रेत भी खा जाती, और

कर, या दूध और मधु के रंग से मिलाकर

रंगों का भी शायद शौक होता है मुलाखा खाने का। जो सिर्फ किसी रंग की उपमा में किसी को विरह लिखना हो तो मेरा क्या है वह सबम पहले सप फली की उपमा में कोई विरह लिखेगा। उसका जितना गुस्सा रंग किसी फली का नहीं होता। उसने रंग में जैसे भाग जलती होती है। पर इसी सप फली का दूसरा नाम मौत फली है। इसको बस हाठा स छुमाने की दर हाती है

ग्राम मिट्टी में से उगने वाली जड़ी-बूटिया का जहर सिर्फ हाठा को चढ़ता है, पर इंसान के मन में से उगने वाली जड़ी-बूटिया का जहर आँखों का भी चढ़ता है माँ के भी चढ़ता है साँसों को भी चढ़ता है, ख्याला का भी चढ़ता है और सपना का भी चढ़ता है

कभी कभी नदी की आवाज में से अचानक बहुत किरपासागर जो का आवाज उभर आती है—कमूर मेर काना का है आवाज का नहीं—पर फिर नो ऐस लगता है जैसे वह आवाज मेरे कानों से मजाक-सा करती हो

बस सोचना चाहता हूँ कि मेरे कान उस आवाज से मजाक करते हैं। पर पता है, यह सच नहीं। शायद कभी हो जाए पर अभी नहीं। अभी तक यही सच है कि यह आवाज

यह सब कुछ शायद इसलिए कि उनकी आवाज में कुछ खास तरह का कुछ था—नदी के पानी का तरह हल्का सा हात भा बड़ा भारी, और अपने जोर से बहता। कोई पत्थर कंकड़ पत्ता या हाथों का मल उसमें फँक भा द ता उससे बपरवाह उसका बहाकर ले जाता, या परा में फँककर उसके ऊपर गुजर जाता।

पानी के बहाव की शायद सिर्फ भाँखें होती हैं, कान नहीं होते। उनकी आवाज भी एक सीध में चली जाती थी, इंद गिद की बातों को

सुनकर कभी खड़ी नहीं होती लगती थी। साधु डेरे भी, घर-गृहस्थी की तरह, भगडो-वगडो और निन्दा-चुगली से वसते हैं—जाले इनकी दीवारों पर भी लगते हैं। पर महंत किरपासागर जी की आवाज के बारे में मैं यह जरूर कह सकता हूँ कि वह नदी के वेग की तरह, इस सब कुछ को बहाकर ले जाती और उन्हें आखे भरकर देखती भी नहीं थी।

यह आवाज दो तरह की थी—एक भारी और वेगवती, और दूसरी बहुत सूक्ष्म, उदास और पवन की तरह पवन में मिलती, और अपने अस्तित्व का सबूत भी चुराती।

पहली तरह की आवाज, एक खास तरह के प्रभाव को लेकर चलती थी, पर दूसरी तरह की—इससे त्रिक्कुल बेपरवाह होकर।

कोई जब भी बात करता है सिर्फ पहली तरह की आवाज की ही बात करता है। शायद वह प्रत्यक्ष थी, इसलिए। और शायद लोगो की अपनी हस्ती उसके प्रभाव के नीचे झुक जाती थी, इसलिए। पर मेरे लिए इस तरह नहीं। सोचता हूँ—बाहर दिखते बोझ को कोई हाथ से अपने ऊपर से उतार सकता है, पर वह जो दूसरी किस्म का कुछ होता है, जो सासो में मिलकर छाती में उतर जाता है, उसका क्या करे।

मन्दिर के साथ वाले जंगल में, यह दूसरी तरह की आवाज मैंने कई बार सुनी थी। वह अकेले, रात-प्रभात, कभी उस जंगल में खो गए लगते थे—आवाज को भी शायद, जंगल की शा-शां में मिलाकर, खो देना चाहते थे—एक ही बोल होता था, जो बार-बार होठों से झड़ता था—“मुद्दतें गुजर गईं बेयार ओ मददगार हुए।”

यह बोल उनके होठों से पीले पत्ते की तरह झड़ता था, फिर होठों पर हरे पत्ते की तरह उगता था, और फिर होठों से पीले पत्ते की तरह झड़ता था...

पजों के बल चलकर मैंने कई बार इस आवाज का पीछा किया था।

अपन बानो की इस चोरी म मुझे बाईं उसाहना नही । सिफ कई बार ऐस हाँठा था कि मेरे बान बहुत दब करने लगने थे और लगना था कि एक नफरत मेरे बाना म पोष की तरह मर जाती थी

पता नही, यह असती अथों म नफरत थी या नहीं । यदि थी तो इससे बचन क लिए मैं बड़ी आसना से यह कर सकता था कि कभी वह आवाज न सुनता । एक बैपरवाही की रुई बाना म दे सकता था । पर मैं तो उस आवाज का पीछा करता था वह मुझे बुलाती नही थी, पर फिर भी पजा के बल चलकर मैं उसके पीछे जाता था । उसके बिना बाना को जसे एक बेचैनी सी होती थी ।

आज आवाज बाईं नही पर उसकी कल्पना अभी भी बाकी है । वही उस मरी हुई आवाज को फिर स जीवित कर देती है । और फिर वह सिफ मेरे बानो तक सीमित नही रहती कई बार मेरे होठा तक भी आ जाती है । हाँठ उसके मार के तले हिलने लग पड़ते हैं और हिलत हिलते खुद एक आवाज सी बन जाते हैं—मुद्दतें गुजर गई बयार धो मल्लगार हुए

किसी साइ फकीर ने कहा है—

कुन फिकुन जग बानो ई
कीतियाँ नी जाराबरियाँ
जुब अपनी तो जुग कीतो ई
तेरियाँ कीतियाँ मत्थ घरियाँ

१ तुमने जब कहा कि मैं एक से अनेक हो जाऊँ तब तुमने हममे उबादाती का । तुमने हमें अपने स अलग कर दिया और तुम्हाग किया हमें स्वीकार करना पड़ा ।

उंस साई-फकीर ने भी शायद यही एकाकीपन भोगा था, जो महत किरपासागर जी ने वेयार मददगार होते हुए भुगता था...

कुन-फिकुन—मै एक से अनेक होऊ—

पता नहीं किस अपार शक्ति को यह ख्याल आया ? सब छोटे-छोटे टुकड़ों में बंट गए थे—एकाकीपन के टुकड़ों में ।

महत किरपासागर जी का अस्तित्व भी एकाकीपन का एक टुकड़ा था—और उस टुकड़े ने शायद बिल्कुल मिट जाने के खौफ में से एक और टुकड़े को जन्म देना चाहा था—मुझे ।

किसी के बजूद पर लादी गई किसी की मरजी...

मुझे उनसे नहीं, उनकी इसी मरजी से नफरत है...

अपना आप नाजायज़ लगता है, शायद इसलिए यह नफरत जायज़ लगती है...

बीस

आज वह आया था—वही दीनानाथ । कपड़े साधारण थे, घर के घुले हुए थे, साफ-सुथरे, पर उसके सिमटे हुए अंगों से लगकर कुछ सिकुड़े-से लग रहे थे, उसके मुह की तरह दीन-से लग रहे थे, और उसके मुख से निकली बात की तरह झिझकते-से, और गुच्छा-से होते...

उसके गले में कोई अगोछा-सा था और उस अगोछे की कन्नी वह अपने हाथ से ऐसे मरोड़ रहा था, जैसे अभी भी एक कपड़े के टुकड़े से लालटेन की चिमनी पोछ रहा हो...

पता नहीं उस दिन उसकी चिमनी पोछते हुए देखकर उसका किस तरह का मुह ध्यान में भ्रम गया था। लगा वह कई बरसों से एक चिमनी का पोछ रहा है।

वह बड़े एकांत के समय आया था। यह शायद संयोग नहीं था, वह वक्त को देखकर आया था। मैं उस वक्त अकेला मंदिर के पिछवाड़े वाले जंगल में पगडंडिया पर घूम रहा था। राज शाम का सन्ध्या के समय इस तरह घूमता हूँ। एक नियम की तरह। लगता है उसको इस नियम का पता था।

ये चत के दिन बड़ अजीब होते हैं—पेडा की पत्तियाँ पल पल में रंग बदलती हैं, थोड़ी सी हवा से भी काप काप सी जाती हैं और फिर लगता है जैसे वे धबकाकर पड़ों के परों पर गिर रही हों।

उनकी यह दीनता देखकर मन में कुछ होता है।

वह भी जब आया भर पास भरे मन को कुछ हुआ।

मरा घ्याल है उसने भी एक बार चुपचाप पेड़ों की तरफ देखा था—पेड़ जो हर घड़ी नये और दीन-से हों रहे थे फिर उसने, आत्मा का झुकाकर पेड़ों की होनी कबूल कर ली थी—

‘मैं तुमसे एक बात करने आया हूँ’ उसने कहा। पर इतना वह मुझे कहता नहीं गग रहा था, जितना अपने आपको। जैसे काइ पेड़ अपने को पतझड़ के आने की खबर बता रहा हो।

‘वह तेरी मा है’ उसने कहा, और फिर चुप हो गया।

पता नहीं यह बताने वाली क्या बात थी। मुझे पता थी, और उसकी भी मासूम था कि मुझे पता है।

“जाने उसके कितने दिन रहते हैं, पता नहीं दो घड़ियाँ ही हैं, पर उसकी जान अटकी हुई है। तूने उस राजकुमारी की कहानी सुनी है जिसकी जान तात में थी? वह मारने से नहीं भरती थी पर जब किसी

नें तोते की गर्दन मरोड़ दी, उसकी भी गर्दन टूट गई वह भी अभी मरने लायक नहीं थी, पर उसकी जान उसमें नहीं, तुझमें है। तेरी एक नजर में। तू नजर मोड़ता है, उसकी जान लटक जाती है... तू उसे एक बार मा समझकर देख, वह मरी हुई भी जी पड़ेगी। ” यह सब कुछ उसने अटक-अटककर भी कहा और एक सास में भी।

मुझे ऐसा लगा था कि जैसे वह मुझ पर तरस खाकर मुझे गुफा के अंधेरे में से निकालने आया हो, पर उसे यह पता न हो कि अगर उसने दो कदम आगे रखे, तो उसे भी हमेशा के लिए गुफा के अंधेरे में गुम हो जाना होगा।

मुझे जिन्दगी में अगर किसी पर पहली बार तरस आया: तो उस पर—दिल में आया कि उसके होंठों पर हथेली रखकर उसे आगे कुछ कहने से चुप कर दू...

हवा तेज नहीं थी, पर पेड़ों की पत्तियां झड़ी जा रही थी। मैं हवा को हाथ से रोक नहीं सकता था।

“वह बड़ी नेक औरत है...” शब्द उसके मुह में थे, मेरे कान वीरा-से गए। वही घड़ी सामने आ गई, जब महत किरपासागर जी ने आखिरी स्वासों के समय कहा था, “वह एक पुण्यात्मा है...”

लगा—यह दोनों मर्द, मुझे—एक तीसरे इन्सान को—यह बताने के बजाय, एक दूसरे को बताते, फिर ?

तो क्या फिर भी दोनों के मुह से यह बात निकलती ? सोचा—महत किरपासागर जी जीवित नहीं, पर उनकी कही हुई बात बाकी है, जो मैं यह इस भोले इन्सान को सुना दू ? लगा—यह जो स्वयं ही गुफा के अंधेरे में भटकने के लिए आया है, तो मैं क्या कर सकता हूँ.

इसलिए जवाब दिया—“मुझे पता है, महत किरपासागर जी ने भी यही बात कही थी।”

बहुत दिन हुए, महामारन की एक कथा पढ़ी या कि एक मुनि न बन करामा राजा की भार से इककीस बैल दक्षिणा में मिले, पर मुनि न वे बन दूसरे ऋषियों का दाग कर लिए और राजा से और बैल मागे। राजा ने गुस्से में भाकर मरवा हुई गायें दे दी। मुनि ने भी गुस्से में भाकर राजा के नाग के लिए और यज्ञ भारम्भ किया। वह ज्यो-ज्यो गड्ढों का मांस काटकर हवन करता गया त्याग-त्याग राजा का राज्य नष्ट होता गया

लगा—मैंने जा बात कही थी, वह भी एक मरी हुई गाय का मांस काटकर हवन में डालने वाली बात थी और उसके साथ धमा इस सामन खड़े इस तान के मन का स्वर्ग नष्ट हो जाएगा

मा उस वक्त मरी हुई गाय की तरह लग रही थी

पर बाद में स्वर्ग नापद भुलावे के पदों में नहीं होता सच की नग्नता में होता है। लगा मैं कुछ भी कहूँ, उसके मन के स्वर्ग को नष्ट नहीं कर सकता था। क्योंकि मरी बात के जवाब में उसने स्वयं ही कह दिया था 'उन्होंने ज़रूर कहा होगा क्योंकि यह सच है।'

एक बार मकान नष्ट आया कि मैं सचमुच उसका स्वर्ग को नष्ट नहीं कर सकता। इसलिये फिर कुछ ठहरकर कुछ और स्पष्ट-सा कहा—

'उन्होंने यह भी बताया था कि उस पुष्पात्मा को भगवान् ने स्वयं सपने में दगाव लिए और हूकम लिया'

लगा मैं उसका स्वर्ग का घर अभी नष्ट नहीं किया था, तो भा एक सेंप ज़रूर लगा दी था। और मैंने कहा 'भगवान् ऐसा हूकम देने के लिए तैयार किया पुष्पात्मा का हा चुन सकता है'

कराम था—वह बापक पूछा—क्या हूकम? क्या हूकम? पर उसने कुछ कहा पूछा। फिर यह लगा कि वह कुछ जाना-या ज़रूर था। फिर वह कुछ दर सामन पड़ा की तरफ दबता रहा, जिनकी टहनियाँ पल-पल झटपट पत्तों में नगा-भी हो रही थीं।

“हा, उस पुण्यात्मा को ही मैंने यह हुक्म देने के लिए चुना था। यह मेरा हुक्म था... उसने हमेशा मुझे भगवान् समझा है...” उसने कहा।

लगा—यह कहते हुए न उसका मुह दीन-सा हो रहा था, और न उसकी आवाज हीन-सी थी।

याद आया—पाच-छ दिन पहले, जब उसके घर गया था, उसने भी कुछ ऐसा ही कहा था—“मेरे ऐसे करम कभी नहीं हुए कि भगवान् मुझे सपने में दर्शन देते, और कुछ कहते, मैंने सिर्फ उसका हुक्म माना जिसे मैंने सारी उम्र भगवान् समझा। दर्शन उसे हुए थे, मैंने सिर्फ हुक्म माना...”

लगा एक सास था जो मेरा छाती की हड्डियों में अटक गया था...

“वह ऐसी नेक औरत है, कि मैं अगर उसे सीधा-सादा हुक्म देता, वह रोती, और मेरे पैरों पर गिर पड़ती कि मैं इस हुक्म को वापस ले लू। मैं उसका भगवान् था, पर जो भगवान् सामने दिखता हो, उसको यह भी तो कहा जा सकता है कि हुक्म को वापस ले ले... इसलिए मैंने अपना हुक्म उसको उस भगवान् के मुह से सुनवाया, जो दिखता नहीं। कहा कि मुझे सपने में भगवान् के दर्शन हुए हैं और उन्होंने हुक्म दिया है कि तेरा सजोग...”

लगा—एक अनन्त पीड़ा उस आदमी की छाती में उठी थी। उसने पेड़ के एक तने से पीठ लगा ली, और पलभर के लिए अपनी आखों, आखों की पलकों के नीचे ढांप ली।

फिर उसकी आखों की पलकें धीरे से हिली, उसके होठों की तरह। और उसने कहा—“तुझे शिव की मूर्ति के आगे चढ़ाकर जब महत किरपा-सागर जी ने कहा था कि यह बालक आज से शिव जी का पुत्र है, उन्होंने सच कहा था। क्या हुआ जो तन उनका था, तेरी मा ने जब उनके तन से पुत्र मांगा था, तो उन्होंने अपने तन में शिव का मन डालकर उसे पुत्र

दिया था ”

और लगा—अब उसके मुह पर आया हुआ अनंत दद उसका बन बन गया था । उसने पेड़ के तन से लगी हुई पीठ पेड़ से हटा ली और एक पेड़ की तरह तनकर खड़ा हो गया । और फिर पेड़ पर नय सिरे मे लगे पत्तों की तरह मुस्करा दिया, वह मन मरा था । मैं आप शिव हू । मैंने गिब की तरह जहर का प्याला पिया है ’

उसने सचमुच जहर का प्याला पिया है यह सामन दिख रहा था । मैंने आखें नीची कर ली ।

“तू माचता होया कि तू मेरा पुत्र नहीं । पर मैं ऐसे उही सोचता । हिसाब भिफ लोक का नहीं होता, परलोक का भा हाता है । असली सयोग तन का नहीं होता मन का होता है । तन साथ नहीं देता था, इसलिए तन की जगह मैंने मन का बरत लिया । उसका तन मेरा मन और तू इस सयोग में से भदा हुआ । मैं किस तरह कहू कि तू मरा पुत्र नहा ’

लगा—मरा माथा भुक गया था । वह बट रहा था । मैंने तरी भा पर कोई अहसान नहीं किया था । वह बेचारी अब भा समझता है कि मैं उसे भगवान् का रूप होकर मिला हू । पर यह मेरा पाप है कि मैंने उसे कभी कुछ और नहीं बताया । पता नहीं, उसकी आत्मा में भगवान् का रूप होकर रहने का तालच है ’ वह कहता कहता हस सा दिया और फिर कहने लगा— तू उसका बेटा है, इसलिए तुझे अपना बेटा समझकर बताता हू कि मैंने अपनी जवानी मे उसक साथ द्रोह किया था । वह अभी डाता मे स निकला भी कि मैं उसे छाड़कर परदेस चला गया था । घन कमाने के लिए । कमाया भी बडा उजाडा भी बडा । पर घन से दयाल मैंने भरने आपका उजाडा । ऐसी बीमारी लगी कि जिनक इलाज के वक्त सयाना ने मुझे बताया कि अब मरा का कभी नहीं चलेगा । बीमारी का छाया हुआ जब धर लौटा, उस नेकबन्त के साथ लगने

स्नायक नहीं था। मन फटकारे देता था। पर मैंने उसे बताया कुछ नहीं। बरस बीत गए। रोज देखता था कि वह एक पुत्र के मुह को तरसती थी। कितनी देर देखता? उसका कुछ तो कर्जा चुकाना था...जैसे-तैसे उसे तेरा मुह दिखाना था...''

लगा—उसके पाव घरती से ऊंचे हो गए थे। इतने ऊंचे कि मेरे माथे तक पहुंच गए थे..

और शायद उसके पाव चल रहे थे, मुझे लगा, मेरा माथा भी उसके पैरों के साथ-साथ चल रहा था

एक बहुत ही लम्बी राह थी, कुछ नहीं दिख रहा था। शायद शाम का अंधेरा बहुत गाढ़ा हो गया था, कि शायद मैं मन्दिर की गुफा में चल रहा था .

और फिर एक उजाला-सा हुआ। देखा—उसके हाथ में एक लाल-टेन थी। शायद उसने लालटेन अभी जलाई थी...

और देखा—लालटेन की चिमनी पर एक भी दाग नहीं था। उसने चिमनी के शीशे को पोछ-पोछकर उसके सारे दाग उतार दिए थे ..

और लालटेन की रोशनी में देखा—मेरे सामने मेरी ओर बिटर-बिटर देखता मेरी मा का मुह था ..

मन्दिर के पिछवाड़े वाले जंगल में से चलता हुआ पता नहीं किस तरह मैं वहां उसके घर पहुंच गया था .

मेरी बाहे उसके गले की ओर बढी—जैसे कोई बहुत अधियार गुफा में से निकलने के लिए गुफा का द्वार ढूढता है...

उसके सास मेरे माथे को छू रहे थे कहीं से बहुत ठडी आ ताजी हवा का भोका आया है, और मेरे सासो मे मिल गया है ..

शायद अब सामने, एक कदम की दूरी पर, कैलाश पर्वत है...

इक्कीस

मारे के मारे आसमान ने जमे धरती को अपने हाथो धोया हो

बादल मरे पावा के नीचे कुछ रंगम सा बिछा रह हैं

अचानक पेड़ो की टहनिओ ने मरे गिर कुछ लपेट सा दिया है

अभी माथे पर एक ठडी फुहार सी पडी है, कुछ उठत पक्षी सिर क ऊपर से गुजर है गायद उ हान अपने पखा से कुछ कुहरा भाडा है

एक सरसराहट सी भी शायद उनके पखा से भड़कर मरा छाती म पड गई है

सूरज की कुछ किरण गामद साई हुई बफ को जगाने क लिए भाई हैं ।

नदिया का पानी एस ठुमककर चल रहा है जस उसन परा म चादी की खडाऊ पहनी हुई हो

लगता है—कलाश पवत की सारी सुंदरता सारी ऊचाई और सारा एकाकीपन मेरा है

एक बडे निमल पानी का सोता मरी मा का मुह जसा है जिसमे मरी परछाई ऊप रही है

कमल फूला क ताताब का दखकर अनायास ही महत निरपासागर जी का ब्याल आ गया है

अभी किसी टहनी से एक फूल गिरा था, और झडाल एक हथेली की तरह मेरे पर को छू गया था । एक पल लगा पैर जसे भूछित सा हो गया था

दूर वह गुफा दिख रही है जिसके अंधेरे में मैं कई वरस चला हूँ।
मेरा ख्याल है कोई उस अंधेरे में अब भी लालटेन लेकर खड़ा है...

मेरा ख्याल है शिव और पार्वती पत्थर नहीं हुए, सिर्फ वहाँ, मन्दिर
की छत के नीचे, एक जगह खड़े, हाथ के इशारे से बता रहे हैं कि यह गुफा
कैलाश पर्वत पर पहुँचती है...

लगता है—कैलाश पर्वत की सारी सुन्दरता, सारी ऊँचाई और सारा
एकाकीपन मेरा है ..

आखिरी पकितया

शॉपिनहावर की जेब में पड़े हुए सान क सिक्के की तरह हम भी कई लोग —छोटे छोटे शॉपिनहावर—सोने की डली जैसा बिना न किसी सोच का सिक्का जेब में डाले घूमते हैं शॉपिनहावर बरसो उस घड़ी का इन्तज़ार करता रहा—जिम घड़ी वह सोने का सिक्का दान कर सकता। वह घड़ी उसकी जिन्दगी में नहीं आई। सिक्का उसका जेब में ही पड़ा रहा। और जिन्दगी की आखिरी सास तक उसे अपनी जेब का बौझड़ाना पड़ा। शायद हमारी भी कइया की, यही नक्दीर है

कहते हैं शॉपिनहावर जिस होटल में दो बक्क रोटी खाता था, राटा का भज पर, रोज सोने का एक सिक्का रखकर राटी खाना शुरू करता और आखिर भेज से उठने लगना तो वह सोने का सिक्का फिर जेब में डाल लेता। बरसो बाद एक बरे ने उससे यह भेज पूछने की जुगत का। उसने साचा था कि यह कोई शॉपिनहावर की खानदानी रस्म हागा। पर शॉपिनहावर ने उसे अपनी एक अजीब हसरत बताई—मैं आज तक कभी दान नहीं किया, पर यह साने का सिक्का मैं रोज इस भास में जेब में से निकालता हूँ कि मैं उस पहली घड़ी यह सिक्का दान करूँगा

जिस दिन मैं किसी अंग्रेज को घोड़ों, औरतो, और कुत्तों के सिवाय किसी चीज़ के बारे में बात करते सुनूँगा....”

शॉपेनहावर होने का कोई दावा नहीं—यह सिर्फ़ आस-पास दूर-दूर तक फैले हुए ‘डिके’ की बात है। ‘मॉरेलिटी’ के सीमित अर्थों, और सिकुड़े हुए घेरो की बात है। और उस दृष्टिकोण की बात, जो बहुसंख्यकों की आदतों में शुमार हो तो स्वीकृत माना जाता है, पर जो गिने-चुने लोगो का चिन्तन हो तो अस्वीकृत।

(‘डेमोक्रेसी’ सिर्फ़ उन्नत और विचारशील लोगो को मुआफ़िक आती है, पर मानसिक और आर्थिक तौर पर पिछड़े हुए लोगो को यह नसीब नहीं हो सकती। मूर्ख बहुसंख्यक के मूर्ख फैसले वक्त की लगाम सम्भालते हैं—और जिन्दगी की विशाल सीमाएं उनके खुरों के नीचे कुचली जाती हैं। ये लोग ‘आपरैस्ड’ हो तो एक रेवड की तरह हाके जाते हैं, ‘आपरेसर’ हो तो एक लाठी की शक्ल में हाकते हैं। हालते दोनों ही भयानक हैं।)

नीत्शे ने सीमित अर्थों वाले इन्सान से, विशाल अर्थों वाले इन्सान को अलग करने के लिए ‘सुपरमैन’ शब्द गढ़ा था, मैंने ऐसा कोई शब्द नहीं गढ़ा, पर मेरे सबसे पहले नॉर्वेल के डाक्टर देव को कुछ ऐसे ही अर्थों में लिया गया था। हमेशा सोचती रही हूँ, क्या यथार्थवाद के अर्थ इतने सिकुड़ गए हैं? क्या बहुसंख्यक का जाना-पहचाना जो कुछ है, सिर्फ़ वही यथार्थ है? और क्या अल्पसंख्यक कहे जाने वाले लोगो का अमल यथार्थ नहीं?

पर सच की तलाश जिसकी प्यास हो, और सिर्फ़ ‘सर्वाइवल’ जिसकी तसल्ली न हो, यकीनन वह मॉरेलिटी के जाने-पहचाने अर्थों से टूट जाएगा।

डॉक्टर 'ब' की ममता पर, एक सपास की रक्षा पर ब' 'रखावा' की वरमी पर 'एक भी घनीता की घनीता पर घरी गोगर गोपिया की घतना पर 'चक न० छत्तीम' की घनका पर और एरियल की एकता पर इस जुरत का दाप है। ये दाप हैं क्याकि मिय मवाइवल इट बरूत नही था।

अपेर म मागे जात भूड क बजाय इहाने उजास म सब का भागना चाहा—चाहे इम्मॉरेल बहसयाने की कीमत दी। अपेर की मारनिटी से उजासे की इम्मॉरेलिटी इनका खुनाव था।

'मुपर' जसा कोई शब्द मैं इन पात्रा के माथ जाडना नही चाहती—इनका यजूद और उसका इजहार सिफ एक लेखक के तौर पर जेब म हास हुए सोचा के सिक्की की खचने का मल है—इस घास स कि अगर बहुत नही, ता गायद कुछ लोग, छोडा औरता और कुत्ता के सिवाम किसी और चीज की बात भी सुनना चाहेंगे (परिचमी स्तर के मुकाबले मे जो पूर्वी स्तर के अनुसार कहना चाह तो औरत, पमा और परलोक कहा जा सकता है।)

मैंने अपने नॉवेलों मे जिस औरत की बात कही है, वह सिफ 'सेक्स चिह्न' के घघों से टूटकर चलती है इसलिये वह भलग है। और इसलिये चाहे वह 'एरियल की एकता (एक औरत) के मुह से हो या 'जला-वतन के मलिक (एक मद) के मुह से—वह इंसान की बात है। एकता का दुखात है कि उसके साबुत अस्तित्व क लिए, इंसान की सिफ टुकडो मे बचलने वाले समाज की व्यवस्था मे कोई जगह नही। और मलिक का दुखात है कि उसकी उम्र से बडे उसके मानसिक स्तर के वास्ते, कुछ लकीरो मे लिपटे हुए समाज के ढाचे मे उसकी कोई पूर्ति नही।

मच्छाई का जिशामु मद भी हो सकता है और औरत भी। सिफ सब की परिमाया अपने अपने मानसिक विकास के अनुसार होती है

इस नये नाँवेल का नायक एक मर्द है—कोई बीस बरसो की उम्र का, जवानी की पहली सीढ़ी पर खड़े होकर अपने बजूद को एक बेवसी से देखता, अपने माहौल को घूरता, और उसका कारण बने लोगो से क्रुद्ध । अपने क्रोध को वह आग की तरह जलाता है और उसके अगारो से खेलता, अपने हाथ पर भी छाले डलवाता है और अगर बस चले तो उसकी चिन्गारी उनकी भोली में भी फेकता है जिनका अस्तित्व उसके अस्तित्व से सम्बन्धित है । यह सच्चाई को उसी एक कोण से देखने का प्रतिक्रम है, जिस कोण से देखने की आदत उसे उस के जन्म से मिली है—और जिस कोण से यह अक्सर देखी जाती है ।

‘ग्रोथ’ इन्सान को एक कोण पर नहीं खड़ा होने देती । यह नायक ‘ग्रोथ’ का चिह्न है, इसलिए जब वक्त आता है, वह किसी और कोण पर खड़ा होकर सच्चाई को देखने से इन्कार नहीं करता । न उसको समझने से इन्कार करता है ।

जिन्दगी अपने जाने-पहचाने अर्थों में जिस दायरे का नाम है उसको एक नज़म में मैंने कुछ इस तरह कहा था .

छे कदम पूरे ते इक अघा
जेल दी इक कोठड़ी
कि बन्दा बैठ उठ सके
ते निसल वी हो लवे ।
‘रब’ दी इक बही रोटी
‘सबर’ दा बकल सलूगा
चाहवे ताँ रजपुज के
उह दोबे डग खा लवे
ते जेल दे हाते दी गुठे

इक छप्पड़ ज्ञान दा
 कि बग हथ मुह धावे
 (ते कुज मच्छर नतार के)
 भाह बुक भर के पी लवे'

पर ज्ञान का खड़े पानी का जाहड़ बनाना ज्ञान की हतक है और उसका बासीपन को चुल्लू भर पीकर एक तृप्ति हासिल करना इमान की हतक। और कुछ लोग ऐसे हाते हैं—जो यह हतक नहीं कर सकते

इंसान के ऊँच मानसिक स्तर की सम्भावना को अगर एक पंक्ति में कहना हो तो कुछ ऐसे कह सकती हूँ—इंसान हर खाई के ऊपर आप ही एक पुल बन सकता है आप ही उस पुल पर से गुजरने वाला और आप ही अपने से आगे पहुँचने वाला।

१ छ कर्म पूर और एक आरा
 जल की एक कोठरी
 कि आत्मा बैठ-उठ सके
 और निवृत्त भी हो ले ,
 मनु का एक बामा रागे
 सम का सलोना बकल
 वह चाहे तो हमे हो
 दोनों बत खा ले
 अगर जल के झहले के पास
 ज्ञान का एक जाहड़
 कि आत्मा हाथ मुँह धोए
 (उमर मन्दर नितर कर)
 और घूँ मर पा मा ले

इस नावेल के नायक को मैं उसकी जन्म-कहानी से लेकर जानती
 'उस दिन से जिस दिन उसको साधुओं के किसी डेरे में चढ़ाया गया
 '—यह बहुत बरसों की बात है। अब देखे हुए बरसों गुजर गए, पर
 अब भी याद करू तो बड़े तराशे हुए नक्शों वाला उसका सावला मुह,
 उसकी उदासी समेत. आंखों के आगे आ जाता है। उसके बचपन का,
 उसका बार-बार कुछ सोचता हुआ मुह मुझे याद है, पर नहीं जानती कि
 उसने अपनी भरी जवानी में जिन्दगी को कितना हसकर कबूल किया,
 कितना रोकर। मेरे नावेल के पन्नों में चलता हुआ वह आखिर में जिस
 अवस्था को पहुँचता है, वह मेरी कल्पना है।

रवायती मय्यार, खुने आसमानों की सच्चाई नहीं होते, यह 'फाल-
 सरूप' की एक सिकुड़ी हुई दानाई होते हैं। 'फालसरूप' में कोई चाहे
 तो चाद-सितारे भी जड़ सकता है पर चाद-सितारों की लौ नहीं जड़
 सकता...

इस नावेल के नायक को मैंने इसीलिए यात्री कहा है क्योंकि सिर
 को छूती छत को तोड़कर वह चाद-सितारों की लौ की यात्रा आरम्भ
 करता है। अंधेरे से पैदा हुई एक तीखी नफरत में से उसकी यह यात्रा
 शुरू होती है—यही नफरत उसका हथियार है, जिसके साथ वह सिर
 के ऊपर तनी हुई छत को तोड़ने का यत्न करता है...

छत को तोड़ना, या मीलो लम्बी एक गुफा को लाघना एक ही
 अर्थों में है—

सिर्फ एक पक्ष में कहना हो तो कह सकती हूँ कि यह चाद-सितारों
 की लौ के आशिकों के लिए, चाद-सितारों की लौ के एक आशिक की
 कहानी है। अपने से आगे अपने तक पहुँचने की यात्रा।



Zoom

पांच बरस लम्बी सड़क

यह किसी एक सड़क की बात नहीं। बहुत सारी सड़कों की है। इसलिए यह सिर्फ एक सड़क पर चलते हुए पात्रों की बात नहीं, अलग-अलग सड़क पर चलते अलग-अलग पात्रों की बात है। किसी पात्र का कोई नाम नहीं, पर हर सड़क का नाम है—पांच बरस लम्बी सड़क। पांच बरसों के अरसे को नियत कर लेना, सिर्फ एक 'सरवे' की खातिर है।

घरती की मिट्टी सब पात्रों के पैरों के साथ लगी हुई है—उनके पैरों के साथ भी जिनकी कोमल छाती में कुछ सपने पख खोल रहे हैं। और उनके पैरों के साथ भी, जिनकी छाती में उनके सपने सिर्फ सास घोटकर बैठे हुए हैं। और उनके पैरों के साथ भी जिनका छाती में पड़े सपनों की जून बदल गई है—और वे सपने किसी पंछी की तरह चहकने की बजाय सिर्फ कुत्ते की तरह भौंकते हैं...

आज तक मैंने जितने भी नॉवेल लिखे हैं, वे किसी एक राह की, और उस राह पर चलते हुए कुछ पात्रों की बात करते आए हैं। यह एक लेखक के तौर पर, एक चौराहे में खड़े होकर, अलग-अलग राहों को देखने का, और उनपर चलते अलग-अलग राहियों को जानने का एक

तजुरबा है।

एक सडक क राही दूसरी सडक क राहियों का नहीं जानन। सब एक दूसरे से अपरिचित ह। इसलिए एक सडक की कहानी अगर एक काड है तो दूसरा सडक की कहानी उसका दूसरा काड नहीं। न तीसरी सडक की कहानी उसका तासरा काड है। और इसलिए यह एक नावेल नह। पर जा इसक पाठक इसको एक चौराहा मान लें और हर सडक पर घीतती कहानी का ज़िदगा के तजुरबे का एक अग सम्भल लें ता सारे 'मरव' की एक अपनी आकृति बनती है। इस आकृति को, वे चा- तो नावेल भी कह सकते है।

पर यह सब कुछ नावेल क पहचाने हुए अधों मे नही।

अथ है पर पहचान हुए नही। उनकी पहचान के लिए एक ग- जा सबसे ज्यादा मदद द सकता है वह एक्सड है। और एक अनुमान भी मदद द सकना है कि सडक, जो जिल्दुल अलग अलग और विपरीत रास्ता पर जानी दिखती है क्या पता आगे जाकर एक दूसरी मे मिल गई हा और जा पात्र एक सडक पर जात दिखत हैं वहा भूल भटक दूसरी सडक पर पहुच गए हा। या एक क हालात अगर दूसरे की तरह हात तो वह, वही हाता जा आज दूसरा है मैं यह नही कहती कि यह ऐसा दुआ है सिफ यह कि ऐसा भी हो सकता है। इसलिए मैंने कहा भा किमा पात्र का कोई नाम नहीं दिया, यह या 'वह कहकर हा, और 'मद या मोरत कहकर हा बात चताई है।

बान है पर स्पेज और एक्सड।

पांच वरस लम्बी सड़क

नशा सगीत का भी था, कॉकटेल का भी, और शायद बढती रात का उनीदापन भी था, नाचते हुए जोड़ो की आखे आधी सोई हुई-सी थीं ।

सिर्फ विजली के दूबिया बल्व पूरी तरह जाग रहे थे ।

अचानक अंधेरे ने अपना हाथ आगे किया, और रोजनी की आखों पर अपनी हथेली रख दी ।

अंधेरे के होठों में से धीमी-सी आवाज़ आई—हैप्पी न्यू ईयर ।

जवाब में सबके होठ हिले—और जो भी कोई नजदीक था, उसके गाल या गर्दन के मांस से छूकर, होठों की तरह ही गीले हो गए ।

सिर्फ एक लड़की के होठ और सूखे-से हो गए, और उसके जो भी नजदीक था, उसके गाल या गर्दन को छूने की जगह, अपने होठों पर अपनी जीभ फेरी ।

उमकी आखों ने, अंधेरे की तरह फैलकर, अंधेरे को टटोला । और फिर अपने गले में पड़े हुए मिल्क की स्कार्फ की तरह, वह कमरे में से सरककर एक कोने में चली गई ।

उसने सचमुच अंधेरे को टटोलकर उसे ढूँढ लिया था । वह कोने

१०४ पाँच बरस लम्बी सड़क

मे खड़ा था।

—बाट यू गिव भी ए 'यू ईयर किस ?'—लड़की ने कहा और उम लगा कि उसके मुह का रंग शायद बहुत नाल हो गया था।

पर उसे तमलनी थी कि इस अधेरे में उसके मुह का रंग किसी को नहीं दिख सकना। कमरा उसा तरह अधेरा था पर उस लड़की को लगा, कमरे के इस कोने में हल्की सी रोशनी थी।

शायद इसलिए कि कोने में खड़े उस लड़के की कमीज बहुत सफेद थी।

कमीज के सफेद रंग में हल्की-सी हरकत हुई। और उस लड़के ने अपनी बांह लड़की के गिद लपट दी।

लड़की को लगा—उसके गिद हल्की-सी रोगना की एक घारी लिपट गई थी।

लड़की ने सफेद कमीज की धुंधली सी रोगनी को अपने सिर से द्रुषा। और फिर उसे लगा उसके सिर के ठंडे बालों में एक गम भी सास मिल रही थी।

हैप्पी 'यू ईयर अचानक बिजली के बल्व सिलखिताकर बाल पड़े।

सिर्फ लड़की के घने बालों में दूबे हुए उस लड़के के हाठ चुप थे।

लड़की ने अपने गले में पड़ा हुआ सिल्क का स्काफ अपने गले से उतारा, और सिर पर बांध लिया।

शायद वह मोच रही थी कि अपने बालों में पड़ हुए उस लड़के के सासों को वह अच्छी तरह ढाप ले।

कमरे में खड़े हुए जितने भी और थे वह खान की मज की तरफ जाते।

—तुम्हे भूख लगी है ? —लडकी ने मेज से आती हुई प्लेटों की खडखडाहट में उस लडके से पूछा ।

—जो तुम्हे लगी हो तो ।

—एक की भूख का दूसरे की भूख से क्या वास्ता ? —लडकी हस-सी पड़ी ।

लडके ने कहा कुछ नहीं, सिर्फ हस दिया ।

—चलो, बाहर लान में चलें ।

बाहर लान में अघेरा था । पर वैसा अघेरा नहीं जो जलती बिज-लियों को अचानक बन्द करने से हो जाता है ।

—तुम्हे पता है, मैं बाहर अघेरे में क्यों आई हूँ ? —लडकी ने एक पेड के तने के पास खडे होकर कहा ।

लडके ने कहा कुछ नहीं, सिर्फ उसकी तरफ देखा ।

वह पेड के तने के पास खड़ी हुई एक पतली-सी बेल सरीखी लग रही थी ।

—उस वक्त जब उन्होंने बिजलिया बुझाई, मुझे लगा नये वरस के आगमन में उन्होंने पुराने वरस को किसी अघेरे में फेंक देना चाहा था । पुराने वरस को अघेरे में फेंकने की क्या जरूरत थी ? मैं बाहर अघेरे में उनके फेंके हुए वरस को ढूढ़ने आई हूँ ।

—तुम्हे यह बीता हुआ वरस बहुत अच्छा लगता था ? —लडका हस पड़ा ।

—अपने बीतने से दो घण्टे पहले वह मुझे बहुत अच्छा लगने लगा था । —लडकी ने बताया ।

लडके को पूछने की जरूरत नहीं थी । वे सारे कालेज के साथी,

पिछने दो घण्टा से, इस कमरे में बरस की आखिरी शाम मना रह थे। और लड़की को उस बरस का पिछने दो घण्टा से अच्छा लगना इसी कमरे में हुआ था।

—जा तुम चाहो, तो नया बरस भी तुम्हें अच्छा लग सकता है। पुराने बरस की तरफ़।—लड़के ने सिर्फ़ इतना कहा।

—अच्छा जगह से मरा मतलब है वह मरा था। मर पाम था।

—सिर्फ़ दो घण्टा से।

—चाहें सिर्फ़ दो घण्टा से।

—और नया बरस ?

—यह पता नहीं किन मिनट मरा रहेगा। अभी मुझे बापस घर जाना पड़गा तो फिर यह मेरा नहीं रहेगा।

लड़की ने एक गहरा सांस लिया और फिर कहा—जब विजलिया जल रही थी, तुमने उस देखा था ?

—किसे ?—लड़के ने जब मैं हाथ डालकर सिगरेट की डिब्बियाँ निकाली और एक सिगरेट जलाकर पीता हुआ कहने लगा—तुम्हारे दोस्त का ?

—वह मरा दोस्त मेरा।

—पर मैं हमेशा तुम्हें उसके साथ देता है।

—मैं भी हमेशा अपने आपको उसके साथ देता है।—लड़की हस पड़ी और कहने लगी—पर आज मैं अपने आपको उसके साथ देना देना कर सक गइ हूँ।

—मेरा ख्याल था उससे तुम्हारा ब्याह होगा।

—मेरा भी ख्याल है उसका साथ मरा ब्याह होगा।

लड़के ने शाम हमने के सिवा चारा नहीं था। इसलिए वह हस पड़ा।

लड़की का मुँस की एक झुंझलाहट-सी हुई, और वह कहने लगी—

यह हसने वाली बात है ?

और फिर लड़की ने उस लड़के के हाथ से सिगरेट पकड़ ली, और उसे पीती हुई कहने लगी—आज मुझे सारे गुनाह करने हैं। आज मैंने काकटेल भी पहली बार पी है, सिगरेट भी पहली बार पी रही हूँ, और जीने की कोशिश भी पहली बार कर रही हूँ...

यह भर जाड़े की रात थी। आधी रात। पर लड़की को अपना जिस्म तपता-सा लगा—खासकर अपना सिर। उसने सिर पर बाधा हुआ सिल्क का स्कार्फ़ खोल दिया। उसके सिर के बाल बहुत छोटे थे। गर्दन से भी ऊपर तक कटे हुए। उसने जब स्कार्फ़ खोल दिया, बालों ने उसके माथे पर एक भुरमुट्टा-सा डाल दिया।

लड़के को लगा, पेड़ के तने से लगकर खड़ी हुई उस बेल सरीखी लड़की में अचानक बहुत सारे फूल लग गए थे।

बालों के कुडल फूलों की तरह हिल रहे थे। लड़के ने धीरे से फूलों को सूँघा।

लड़की का सिर आगे झुका। लड़के को लगा—फूलों का एक गुच्छा उसके कंधों को छू रहा था।

लड़के के होठों का सास, ओस की तरह फूलों पर पड़ता रहा।

—तुम्हें वह कैसा लगता है ?—लड़की ने पूछा। और लड़की को खुद ही लगा कि जैसे उसकी आवाज़ सिसक गई थी।

—कौन ?—और फिर लड़के ने खुद ही कहा—वह तुम्हारा दोस्त ?

—मैंने अभी कहा था, वह मेरा दोस्त नहीं।

लड़के का उसकी कही हुई बात याद थी, फिर भी उसकी बात करने के लिए उसे एक यही लफ्ज सूझा था। कहने लगा—मैं उसे बहुत नहीं

जानता, पर अच्छा ही होगा, वह हर साल फस्ट आता है।

लडकी के जिस्म की बेल सरीखी नर्माई कस सी गई। और वह कहने लगी—सब यही कहते हैं। मेरे मा-बाप भी यही कहते हैं। अच्छे होने की निगानिया होती है हर साल फस्ट आना, एक अमीर बाप का बेटा हाना, और फिर आई० सी० एस० बनना

लडका हस पड़ा। सिफ एक बार उसका जो चाहा कि वह लडकी के इस रोप में बल से खात हुए होठों को कसकर धूम ले। पर उसने हसकर अपने हाथों को रोक लिया।

सिफ उसका सास लडकी के हाथों को घीम से छूकर पेड के तने के पास गिर गया। और लडकी को लगा—शायद उसका सास भी बीते हुए वरस की तरह था जो अंधेरे में गिर गया था।

—तुम फस्ट क्यों नहीं आते? लडकी का सवाल बड़ा अचानक था। जैसे अंधेरे में गिरे हुए उस लडके के सास को और बीते हुए वरस को वह अंधेरे में हाथ मारकर ढूँढ रही हो।

—तुम्हारा मतलब है मैं अच्छा लडका क्या नहीं बनता?

—तुम्हें पता है मेरे मा-बाप तुम्हारे बारे में क्या कहते हैं?

—मेरा ख्याल है वह मुझे जानते नहीं। इसलिए जान बिना कुछ नहीं कह सकते।

—वह तुम्हें बहुत बुरा लडका समझते हैं।

—यह उनकी समझ के मुताबिक है।

—तुम्हारा मतलब है उनकी समझ उनकी समझ को तुम क्या कहना चाहोगे?

—सिफ इम्मच्योर^१।

लडका खिलखिलाकर हस पड़ी। कहने लगी—अगर कोई बीस

बाईस वरस के एक लड़के को एक चालीस वरस के आदमी के बारे में या औरत के बारे में यह कहते सुने तो ?

—किसी को जाने बिना उसके बारे में कुछ सोच लेना इम्पेच्योरिटी होती है, चाहे सोचने वाले की उम्र कितनी ही हो ।

—पर मैं पूछ रही थी कि तुम फर्स्ट क्यों नहीं आते ?

—क्योंकि मुझे कभी नौकरी नहीं करनी है । मुझे कभी सिविल सर्वेंट नहीं बनना ।

लड़की फिर खिलखिलाकर हस पड़ी । कहने लगी—हिटलर की तरह ? हिटलर का भी जिन्दगी में सबसे पहला फैसला यह था कि वह कभी सिविल सर्वेंट नहीं बनेगा ।

—तुम इस बात से मुझे हिटलर के साथ मिला सकती हो । और शायद किसी बात से नहीं ।

—दज स्पोक जरथुस्त्र—लड़की ने कहा और हस पड़ी ।

लड़के को कालेज में 'लिटिल नीत्से' कहते हुए, लड़की ने कइयो को सुना था । और नीत्से के फिलासफर पात्र जरथुस्त्र का नाम भी उसके साथ जोड़कर, उसकी कही बात को दोहराते, कहते थे—दज स्पोक जरथुस्त्र . .

इस वक्त लड़की ने यह शब्द सिर्फ एक मुहावरे की तरह दोहराए थे ।

—मैं नीत्से बन सकता हूँ, चाहे अन्त में पागल होना पड़े । पर हिटलर नहीं बन सकता ।—लड़का हस पड़ा ।

—हिटलर भी, शायद डिक्टेटर वाला हिटलर नहीं बनना चाहता था । वह एक आर्टिस्ट बनना चाहता था । पर उसे आर्ट स्कूल में दाखिला नहीं मिला था ।

लड़की के गले में पड़ा हुआ सिल्की स्कार्फ उसके गले से फिसलकर,

परा म गिर पड़ा था। इतना लडकी के परा म नहीं—जितना लडके के पैरा म।

लडक ने परा म में स्काफ उठाया। जिस वकन वह स्काफ का लडकी का गदन म लपेटने लगा लडकी ने उसका हाथ पीछे की तरफ माड़कर, स्काफ को लडके का गन्त म लपट दिया। फिर हस पड़ा—तुम्ह पता है, ट्रिनिटी का आर्ट स्कूल मे दाखिला क्यों नहीं मिला था?

—क्यों?

—आर्ट स्कूल का प्रिंसिपल जरूर मरे बाप का तरह हाया। इम्मे च्यार।

वह हसे जा रही थी। वह एक बल की तरह नाजुक थी पर उसकी बान मुनकर लडके को लगा—वह परा-पर ऊंची होता सार पड़ पर फल रही थी।

स्काफ अभी लडके के गले म था। लडके के खून में कुछ उपान-मा आया। उसने जी म आया कि वन् इस रक्षामी स्काफ का तरह इस गंगमा स्काफ सरोखी लडकी का बसकर अपनी छानी से लगा ले।

उसने दो तीन लिचें से सास लिए—जैसे अपने गम खून का वह फूँके मारकर ठंडा कर रहा था।

—क्या सोच रह हो?

लडका कुछ नहीं साव रहा था। सिफ अपने खून को कुछ ठंडा कर रहा था। पर लडकी के पृथन पर उसे एक उपान आया, और उसने कहा—सोच रहा था अगर इसी तरह स्काफ का अपनी गन्त म जाने में अंदर बमरे म चला जाऊ?

—मुझे कोई एतराज नहीं।

—तुम्हारा वह देग लेगा।

—वह अब भी कही न कही खडा होकर जरूर देख रहा होगा ।
उसने तुम्हे उस वक्त भी देखा था, जिस वक्त वारह बजे के अघेरे के
बाद कमरे की बिजलिया फिर से जली थी । और उस वक्त भी
देखा था जब उससे एक घण्टा पहले मैंने तुम्हारे साथ डास किया
था ।

—उसने तुमसे कुछ कहा था ?

—ही हेट्स यू ।^१

—पर मुझे उससे कोई नफरत नहीं ।

—वह अच्छा लडका है इसलिए नफरत का हक सिर्फ उसे है ।

रात और ठंडी हो गई थी । लडकी के गले में पडे हुए स्वेटर के
ऊपर के बटन खुले थे । लडके ने उसके बटन लगा दिए ।

लडकी की सास फिर गर्म-सी हो गई । और उसका जी चाहा कि वह
स्वेटर के बटन फिर खोल दे । इसलिए नहीं कि लडके को फिर एक बार
बटन लगाने पडे, सिर्फ इसलिए कि उसकी छाती का साम सचमुच बहुत
गर्म हो गया था ।

—यह क्या है ? लडकी ने खिंची-सी सास लेकर कहा ।

—क्या ?

—समर्थिग बैरी एलाइव ।^२ तुम्हारे साथ डास करते हुए भी मुझे
लगा था । फिर उस वक्त भी जिस वक्त कमरे के अघेरे में तुम्हे खोजती
मैं तुम्हारे पास आई थी । और अब फिर—जिस वक्त तुमने मेरे स्वेटर
के बटन बन्द किए हैं ..

—इट इज मी^३...

१. तुमसे नफरत करता है ।

२. कुछ बहुत जानदार ।

३. यह मैं हूँ .

११२ पाच बरस लम्बी सड़क

—यू आर ए स्ट्रेंज परसन^१

—हाय ?^२

—बिकाऊ यू आर सो एलाइव हाय आर यू सो एलाइव ?^३
लटकी ने एक बल सा खाकर अपना सिर उस लडके के कंधे पर
रख लिया । दोनों म पेडा की टहनियों की तरह कुछ उलझ सा
गया ।

लटकी का सास सुबकियो जसा हो गया था । उसकी आवाज
उसका सासा म और सुबकियो म फसी हुई थी—मुझे लगता था जैसे
हर किसी मे कुछ मर गया होता है ऐवरी बाडी इज डड ऐट लीस्ट
फिफ्टी परसेंट सिक्स्टी परसेंट इज डड ए व री बा डी ऐंड
ही इज द डडेस्ट आफ आल ।^४

इस ही के बारे मे पूछने की लडके को कुछ जरूरत नहीं थी ।
जिस दोस्त के घर यह पार्टी थी यह जान उस घर के पिछली तरफ
था । लडके को लगा—कि घर की अगली तरफ कुछ कारा और स्टूडरा
की आवाज आ रही थी । पार्टी शायद खत्म हो गई थी । उसने लटकी
का वक्त का ध्यान दिलाया ।

—मैंने तुमसे कहा था मैं अभी घर चली जाऊंगी और फिर यह
नया बरस मेरा नहीं रहेगा ।
— पर

— पर से कुछ नहीं बनेगा । मेरे घर पहुंचने से पहले ही शायद यह

१ तुम अद्भुत व्यक्ति हो ।

२ क्यों ?

३ क्योंकि तुम इतने जानकार हो क्यों हो तुम इतने जानदार ?

४ हर कोई मर चुका है कम से कम पचास या साठ प्रीसदी मर चुका
है हर कोई और वह इन सबसे ज्यादा मृत है ।

वात वहा पहुंच गई होगी । या सवेरे पहुंच जाएगी ।

—तुम्हारा ख्याल है वह तुम्हे कुछ कहने की जगह...

—वह मुझे कुछ नहीं कहेगा । आई टोल्ड यू ही इज द डेडेस्ट आफ आल । पर ऐसे डेड लोगो मे चुगलिया खाने की हिम्मत सबसे ज्यादा होती है ।

—अगर मुझे इसका पता होता...

—फिर तुम मुझे बाहर लान मे लेकर न आते ? और हम अन्दर आराम से एक दूसरे को कहते 'हैप्पी न्यू इयर', 'सेम दू यू'—यह हर एक को कहे जाते, और प्लेटो मे से चावल खाए जाते, और फिर उसपर आराम से पुडिंग खाकर घर चले जाते ।

लडके ने लडकी के जलते होठो को अपने होठो मे ले-सा लिया । और लडकी के होठ ठडे अवेरे की तरह शान्त हो गए ।

और फिर लडके ने अपनी गर्दन से स्कार्फ उतारकर लडकी के सिर पर बाध दिया ।

पूरे वाईस दिन गुजर गए थे । छुट्टियां भी खत्म हो गई थी । पर लडकी कालेज नहीं आई थी ।

चलती हवा को भी कान लगाने से, कोई न कोई मुराग मिल जाता है पर लडके को कोई खबर नहीं मिली थी ।

तेईसवें दिन एक खत आया । खत को खोलते हुए लडके के पपोटे काप-से गए । उसी का खत था, लिखा था—गुनाहो की सूची शायद अभी बहुत लम्बी नहीं हुई । सारा घर मेरे लिए एक 'प्रिजन' की तरह है, और आज यह खत इस 'प्रिजन' में से स्मगल करवा रही हू । स्मगलिंग का गुनाह अभी बाकी रहता था । इसमें सिर्फ यह पता देना है कि

कल दापहर का तीन बजे स्टेट लाइब्रेरी म जरूर घाता । सिफ एक ग्नि व लिए लाइब्रेरी म जान का इजाजत मिला है ।

गत दूसरे दिन मिला था । यही यह कल था जा लडक ने घड़ी की तरफ देखा घड़ी न घाने वाली घड़ी की तरफ

लाइब्रेरी म हजारों किताबें थी । इन किताबा ने दुनिया क पता नही कितने हजार सागा की अपने पृष्ठों म पनाह दे रखी थी—पर इन पृष्ठों के बाहर भी आज कोई दो जने थे, जिन्ह इन्होंने पनाह दी ।

यह जिन्गी म पहली बार था, जब लडके का रोने को जी चाहा । लडकी का मुह पिघलकर सिफ उसकी दो आसों बन गया था ।

—मैंने ठीक कहा था मेरे घर पहुंचने से पहले उन तक यह बात पहुंच चुकी थी । दट ईडिपट रण मार्ड फादर ।^१

—पर फादर

—मैंने स्टालिन का नही देखा सिफ उसका वक्त जो कुछ हुआ था वह पढ़ा है । पर उस दिन मैंने देखा भी । सचमुच उस ग्नि मर फादर की शकल भी स्टालिन की तरह हो गई थी ।

लडकी हस-सी पड़ी । लडके ने उसके बाईस दिनों की भयानकता को इस तेईसवें दिन कुछ आसान सा करने के लिए उसकी हसी की री समात ली । कहने लगा—सो आज से मैं तुम्ह मिस स्टालिन कह सकता हूँ ।

इम बार लडकी की हसी बड़ी स्वाभाविक थी । कहने लगी—इस नाम का मुझे न्याल नही आया पर उस रात मैंने जरूर साचा था कि मैं

मामने मेज पर कुछ किताबें पड़ी था । एक किताब की जिल्द का

१ उम बेबकूफ ने मेरे पिता जी को फोन कर दिया ।

पीला रंग लडके के मुह पर फिर गया ।

—तुम धबराओ नहीं । मैंने मरने के बारे में नहीं सोचा था । सिर्फ उस घर को छोड़ने के बारे में सोचा था । -

इस बार मेज़ पर पड़ी हुई एक और किताब का गहरा-सा रंग लडके के मुह पर छा गया ।

—वह अब मुझे इस कालेज में नहीं भेजेगे । पर पढाएगे जरूर । क्योंकि उनके ढूँढे हुए लडके को आई० सी० एस० बनना है । और आई० सी० एस० की बीबी का पढना जरूरी है । वह मुझे कलकत्ता भेज रहे है, होस्टल में पांच बरसों के लिए ।

—यह तुम्हारे कालेज का पहला बरस है ?

—पहला बरस । इसीलिए तीन साल बी० ए० के और दो साल एम० ए० के । कुल पांच साल ।

—यह सब तुम्हे कैसा लगता है ?

—टैररिज्म^१ ।

लडका बोला नहीं ।

—तुम चाहो तो मैं अभी, इसी घड़ी सब कुछ छोड़ सकती हूँ ।

लडका कुछ देर तक उसकी तरफ देखता रहा । वह धबराई हुई नहीं थी । सिर्फ उसकी अडोलता कुछ सोच रही-सी लगती थी ।

—गुनाहों की सूची शायद अभी बहुत लम्बी नहीं हुई ।—लडके ने लडकी के शब्दों को दुहराया ।

—भागने का गुनाह अभी बाकी है ।—लडकी हस पड़ी ।

—यह गुनाह छोटा है । मेरा ख्याल है, इससे बड़ा गुनाह करना चाहिए ।

—यह छोटा है ?

—छोटा इसलिए कि वक्त बीतने पर तुम्हें पछतावा भी हो सकता है ।

—तुम्हारे होने हुए मैं पछताऊंगी नहीं ।

—अभी तुम बहुत छोटी हो ।

—बालिंग हूँ, अठारह साल की ।

—कच्चे रेंगम नी ।

सड़की एलास्टिक की जीन, और गले में रा सिस्का का ग्लाउज पहने थी । कहने लगी—कच्चे रेंगम की मैं नहीं, सिर्फ मरा ग्लाउज है ।

—तुम नहीं सिर्फ तुम्हारा ग्लाउज और तुम्हारी उम्र ।—सड़की ने एक गहरा सांस लिया । फिर कहा—मैंने तुम्हें बताया था कि मैं सिबिल मर्वेट कभी नहीं बनूँगी । मैं सिर्फ लिखना चाहता हूँ । बन सक्ता तो राइटर बनूँगा नहीं तो जर्नालिस्ट । तुम बड़ी अभीरी मे पली सड़की हो

—अभीरी मैं, पर बड़ी सस्ता मैं ।—सड़की ने टोककर कहा ।

सड़का मुस्करा दिया । बोला कुछ नहीं । पर उसकी चुप जैसे कह रही थी—तुम्ह पता नहीं, गरीब मैं भी एक अभीरी सस्ता होता है ।

—तुम क्या चाहोगे कि मैं उस आई० सी० एस० होने वाल मैंने यह नहीं कहा ।

—फिर ?

—सिर्फ यह, कि अपनी पढ़ाई के बरस पूरे कर लो ।

—पर तुमने कहा था—गुनाहा की सूची अभी बहुत लम्बी नहीं हुई

—इस हालत में सब नी एक गुनाह है ।

—इसी को तुमने एक बहुत बड़ा गुनाह कहा था ?

—अभी का ।

—फिर इसके बाद ?

—तब तुम जो भी कहोगी, वह ठीक होगा।

—मेरा बाप स्टालिन है, पांच वरसो बाद भी उसका फैसला यही होगा।

—फिर हम छोटा-सा गुनाह कर लेगे।

—भागने का ?

—हां।

लडके ने धीमे से अपनी हथेली लडकी की हथेली पर रख दी।

वक्त की सड़क बहुत लम्बी लग रही थी। इस सड़क पर धूप भी बहुत हो सकती थी, ठंड भी बहुत, और बारिश तथा अंधेरा भी। पर लडकी को लगा—वह इन हथेलियों की छांव में चल सकती थी...

तो भी एक बार उसने तरसकर लडके की तरफ देखा। और फिर कहा—तुम्हें वह नये वरस की रात याद है ? जब उन्होंने विजलिया बुझाके पुराने वरस को अंधेरे में फेंका था। क्या एक दिन विजलिया बुझाके यह पाच वरस एकवारगी अंधेरे में नहीं फेंके जा सकते ?

लडके ने उसकी हथेली कसकर भीच दी और कहा—नहीं एक-वारगी नहीं, सिर्फ एक-एक करके। और वह भी वरस नहीं, रोज रात की विजली बुझाकर, एक-एक दिन को अंधेरे में फेंककर...

पाच बरस लम्बी सड़क

सैंक मौसम का था मन का नहीं ।
हवाई जहाज वक्त पर आया था पर नीचे एयरपोर्ट से अभी सिग-

नल नहीं मिल रहा था । जहाज को दिल्ली पहुँचने की खबर "वर भी,
अभी दस मिनट और गुजारने थे इसलिए शहर के ऊपर उसको कुछ
धक्कर लगाने थे ।

उसने लिफ्टकी म मे बाहर भावते हुए शहर के मुँहरे पहचाने, मुँहरे,
किले खडहर, खेत

'क्या पहचान सिफ आस्ता की होती है ? आखें इस पहचान को
अपने से आगे कही नीचे तक क्या नहीं उतारती ?'—उसे ख्याल
आया । पर एक पुन जसी सोच की तरह नहीं ऐसे ही राह जाता ख्याल ।

मुँहरे किले खडहर खेत उसने कई देगो के देखे थे । हर देग मे
इन चीजों के यही नाम होते हैं आदे हर देग मे इन चीजा का अलग
अलग इतिहास होता है । इनके रग इनके बंद इनकी मुह-मुहार भी
अलग अलग होती है—एक इंसान से अलग दूसरे इन्सान की तरह ।
पर फिर भी इन्सान का नाम इंसान ही रहता है । मुँहरे का नाम भी

मुड़ेरे ही रहता है, किले का नाम भी किला ही...

सिर्फ एक हल्का-सा फर्क था—हर देश में इन चीजों को देखते वक्त एक ख्याल-सा रहता था कि वह इन्हे पहली बार देख रहा था। पर आज अपने देश में इन्हे देखकर उसे लग रहा था कि वह इन्हे दूसरी बार देख रहा था और उसे ख्याल आया अगर वह फिर कुछ दिनों बाद परदेस गया तो वहां जाकर, उन्हे देखकर भी, इसी तरह लगेगा कि वह उनको दूसरी बार देख रहा है। बिल्कुल आज की तरह। यह देस और परदेस का फर्क नहीं था। यह सिर्फ पहली बार, और दूसरी बार देखने का फर्क था।

जहाज ने लैंड किया। एयरपोर्ट भी जाना-पहचाना-सा लगा, दूसरी बार देखने की तरह। इससे ज्यादा उसके मन में कोई सेक नहीं था।

ओवर कोट उसके हाथ में था। गले का स्वेटर भी उतारकर उसने कंधे पर रख लिया।

सेक मौसम का था, मन का नहीं।

कस्टम में से गुजरते वक्त उसे एक फार्म भरना था कि पिछले नौ दिन वह कहा-कहा रहा था। पिछले नौ दिन वह सिर्फ जर्मनी में रहा था। उसने फार्म भर दिया। और उसे ख्याल आया—अच्छा है, कस्टम वाले सिर्फ नौ दिनों का लेखा पूछते हैं, बीस-पच्चीस दिनों का नहीं। नहीं तो उसे सिलसिलेवार याद करना पड़ता कि कौन-सी तारीख वह किस देश में रहा था। उसने वापस आते समय कोई एक महीना सिर्फ इसी तरह गुज़ारा था—कभी किसी देश का टिकट ले लेता था, कभी किसी देश का। अगर किसी देश का वीज़ा उसे नहीं मिलता था तो वह दूसरे देश चल पड़ता था...

पासपोर्ट की चेकिंग करते समय, और पासपोर्ट वापस करते हुए,

एक अफसर ने मुस्करा कर कहा 'ना— जनाव पाच बरस बाद दस आ रहे हैं।'

बिल्कुल उस तरह जिस तरह एयर होस्टेस ने राह में बड़े बार घताया था कि इस वक्त तक हम इतने हजार किलोमीटर तय कर चुके हैं। गिनती अजीब चीज होती है चाहे मोला की हा या बरसों की। उसे हसी सी आई।

जटाब में स उसक साथ उतर हुए लागा का लेते आए हुए लोग— हाथ मिलाकर भी मिल रहे थे गले में बांह डालकर भी मिल रहे थे। कइयाँ गले में फूला क हार भी थे। 'पसीने की धीर फूला की गंध में गायद एक तीमरा गंध धीर भी होनी है उसे ख्याल आया। पर तासरा गंध की बात उसे एक घासिन लिखन के बराबर लगी। वह भ्रमा भ्रमी एक परदसा जवान सीतकर धीर उसके लिटरेचर पर घासिस लिखके, एक डिग्री लकर आया था। नये घासिस की कोई बात बट भ्रमा नहीं सावना चाहता था। इसलिए सिफ पसीने धीर फूलो की गंध सूघता हुआ वह एयरपाट से बाहर आ गया।—

घर में सिफ मा थी।

जात बकन बाप मा था छाटा भाई भी, धीर एक लडका नहीं वह लडका घर में नहीं थी वह सिफ उसा न्नि उसके जान वाल दिन आई था। मा का सिफ एस ही कुछ घटा के लिए भ्रम हुआ था कि वह लडकी छाटा भाई ब्याह करके भव दूर नौकरी पर रहता था, घर में नहीं था। बाप सब इस दुनिया में कहा नहीं था। इसलिए घर में सिफ मा थी।

बड़े थोड़े घर से बस जाती हैं, पर बाहर से वही रहती हैं। बड़े थोड़े बाहर से बदन जाती हैं, पर घर से वही रहती हैं।

उसका कमरा बिल्कुल उसी तरह था—उसका पीला गलीचा, उसकी खिड़की के टसरी पर्दे, उसकी मेज पर पड़ा हुआ हरी धारियों का फूलदान, और दहलीजों में पड़ा हुआ गहरा खाकी पायेदान । चादनी का पौधा भी उसकी खिड़की के आगे उसी तरह खिला हुआ था । पर पहले इस सब कुछ की गन्ध—दीवारों की ठंडी गन्ध के समेत—उसके साथ लिपट-सी जाती थी । और अब उसे लगा कि वह उसके साथ लिपटने से सकुचाती, सिर्फ उसके पास से गुजरती थी और फिर परे हो जाती थी । पता नहीं उसके अन्दर कहा क्या बदल गया था ।

मां कश्मीरी सिल्क की तरह नर्म होती थी और तनी-सी भी । पर उम्र ने उसे जैसे घों-सा दिया था । वह सारी की सारी सिकुड़ गई लगती थी । मा से मिलते वक्त, उसका हाथ मा के मुह पर ऐसे चला गया था, जैसे उसे हथेली से मास की सारी सिकुड़ने निकाल देनी हो । मा की आवाज भी बड़ी धीमी और क्षीण-सी हो गई लगती थी । शायद पहले उसकी आवाज का जोर उसके कद जितना नहीं, उसके भर्द के कद जितना था, और उसके बिना अब वह नीचा हो गया था, मुश्किल से उसके अपने कद जितना । जब उसने बेटे का मुह देखा था, उसकी आंखें उसी तरह सजग हो उठी थीं जैसे हमेशा होती थीं । उसकी छाती का सास उमी तरह उतावला हो गया था, जैसे हमेशा होता था । वह कहीं किसी जगह, बिल्कुल वही थी, जो हमेशा थी । सिर्फ उसके बाहर बहुत कुछ बदल गया था ।

“मुझे पता था, तू आज या कल किसी दिन भी अचानक आ जाएगा” मा ने कहा ।

उसने अपने कमरे में लगे हुए ताजे फूलों को देखा, और फिर मा की तरफ ।

मा की आवाज़-सकुचा-सी गई—“यह तो मैं रोज ही रखती थी ।”

“रोड ? कितने जिना स ?” वह हस पड़ा ।

“रोड मा की आवाज उसके जिस्म की तरह धीरे धीरे निकुड़ गई,
‘जिस दिन से तू गया था ।’

‘पाच बरसों से ?’ वह चौंक-सा गया ।

मा मकुचाहट से बचने के लिए रसाई में चली गई थी ।

उसने जेब में से सिगरेट का पकट निकाला । लाइट पर उगली
रखी तो उसका हाथ ठिठक गया । उसने मा के सामने आज तक सिगरेट
नहीं पी थी ।

मा ने शायद उसका हाथ में पकड़ा हुआ सिगरेट का पकट देख लिया
था । वह धीरे से रसाई में से बाहर आकर और बैठक में से ऐश-ट्र ला-
कर उसकी मेज पर रख गई ।

उस याद आया—छोटे होने हुए मा ने उसे एक बार चारा से
सिगरेट पीते देख लिया था और उसके हाथ में सिगरेट छीनकर
खिड़की से बाहर फेंक दा था

मा शायद वही थी पर वक्त बदल गया था ।

मा फिर रसाई में चली गई । वह चुपचाप सिगरेट पीने लगा ।

‘मुझे पता था तू आज या कल किसी दिन भी आ जाएगा ’
उसे मा की आमा कहाँ गई बात याद आई । और उनके साथ मिलती
जुलती एक बात भी याद आई । ‘मुझे पता लग जाएगा जिस दिन
तुम्हें पाना होगा, मैं खुद उस दिन तुम्हारे पास आ जाऊंगी ।’

बहुत देर हुई, जब वह परदेम जाने लगा था, उस एक सड़की ने
यह बात कही थी ।

उस सड़की से उसकी दोस्ती पुरानी नहीं थी वाकफियत पुरानी
थी, दोस्ती नहीं था । पर पाच बरसों के लिए परदेस जाने के वक्त
जाने की खबर सुनकर, अचानक उस सड़की को उसके साथ मुहब्बत

हो गई थी—जैसे जहाज में बैठे किसी मुसाफिर को, अगली बन्दरगाह पर उतर जाने वाले मुसाफिर से अचानक ऐसी तार जुड़ी-सी लगने लगती है, कि पलो में वह उसे बहुत कुछ दे देना, और उससे बहुत कुछ ले लेना चाहता है।

और ऐसे वक्त पर, बरसों में गुजरने वाला, पलो में गुजरता है। उसने यह 'गुजरना' देखा था। अपने साथ नहीं उस लड़की के साथ।

“तुम्हारा क्या ख्याल है, मैं जो कुछ जाते वक्त हूँ, वही आते वक्त होऊँगा?” उसने कहा था।

“मैं तुम्हारी बात नहीं कहती, मैं अपनी बात कहती हूँ” लड़की ने जवाब दिया था।

“तुम यही होगी, यह तुम्हें किस तरह पता है?”

“लड़कियों को पता होता है।”

“तो लड़कियाँ वावरी होती हैं।”

वह हस पड़ा था। लड़की रो पड़ी थी।

जाने में बहुत थोड़े दिन थे। पांच दिन और पांच रातें लगाकर उस लड़की ने एक पूरी बाहो वाला स्वेटर बुना था। उसे पहनाया था और कहा था—“बस एक... इकरार मागती हूँ, और कुछ नहीं। जिस दिन तुम वापस लौटो गले में यही स्वेटर पहनकर आना।”

“तुम्हारा क्या ख्याल है, मैं वहाँ पांच बरस...” उसने जो कुछ लड़की को कहना चाहा था, लड़की ने समझ लिया था।

जवाब दिया था, “मैं तुमसे अनहोने इकरार नहीं मागती। सिर्फ यह चाहती हूँ कि वहाँ का वहाँ ही छोड़ आना।”

वह कितनी देर तक उस लड़की के मुँह की तरफ देखता रहा था।

और फिर उसको यह सब कुछ एक अनादि औरत का अनादि छल

सगा था। वह बेवफाई को छूट दे रही थी पर उसपर वफा का भार लादकर।

कह रही थी "मैं तुम्हें छत लिखन के लिए भी नहीं कहूंगा। सिर्फ उम्र तब तुम्हारे पास आऊँगी, जिस दिन वापस आओगे।"

"तुम्हें किस तरह पता लगेगा मैं किस दिन वापस आऊँगा?" सड़क का टाढ़ करने के लिए उसने कहा था।

धीरे उसने जवाब दिया था—'सुझे पता लग जाएगा जिस दिन तुम्हें जाना होगा।

उम्र दिन वह हस दिया था।

उम्र पर उसने उसे धेरे बरस दान था। लड़कियाँ भी दया थी।

पर किमा चाह म उसने हूँकर नहीं दया था सिर्फ बिनारा स हूँकर।

धीरे वह सोचना रहा था—'गायद हूँकर उसका स्वभाव नहीं, या वह चलता है या एक भार भा उसका माय चलता है और उसके परा का हर जगह कुछ रोक-मा लता है।

इन बरसों में उसने कभी उम्र लड़की का सन नहीं लिया था। लड़की न कहा भी इसी तरह था।

हर दान की दोस्ती उसने उमा दान में छोड़ दी थी। यह साफ उम्र का अपना ही स्वभाव था या इसलिए कि उस लड़की न कहा था।

मित्र वापस आते बरस, जब वह अपना सामान पक कर रहा था उस स्वर्ण का हाथ में पकड़कर वह किनारी देर सोचना रहा था कि वह उम्र धीरे धीरे के साथ पक कर दया उस लड़की की बात रस स, और उस पहन ले।

जो स्वर्ण पहनकर जाना पाच बरसों का वहीं पहनकर जाना उस एक मृगता का-मा बात सगा थी। मृगता की-मी भी धीरे बरबादी

भी ।

और एक हृद तक झूठी भी । क्योंकि जिस वदन पर यह स्वेटर पहनना था, वह उस तरह नहीं था, जिस तरह वह लेकर गया था ।

पर उसने स्वेटर को पैक नहीं किया । गले में डाल लिया । ऐसे जब वह स्वेटर पहनकर शीशे के सामने खड़ा हुआ—उसे आर्ट गैलरियो में बैठे वे आर्टिस्ट याद आ गए, जो पुरानी, और क्लासिक पेंटिंग्स की हूबहू नकले तैयार करते हैं ।

और स्वेटर पहनकर उसे लगा—उसने भी अपनी एक नकल तैयार कर ली थी ।

इस नकल से वह शर्मिन्दा नहीं था, सिर्फ इस नकल पर वह हस रहा था ।

मा को वह सब कुछ याद था, जो कभी उसे अच्छा लगता था । लेकिन वह स्वयं भूल गया था ।

“देख तो अच्छा बना है ?” मा ने जब पनीर का परांठा बनाकर उसके आगे रखा, तो उसको याद आया कि पनीर का परांठा उसे बहुत अच्छा लगता था । मा ने जाने वाले दिन भी बनाया था ।

उसने एक कौर तोड़कर मक्खन में डुबोया, और फिर मां के मुह में डालकर हस पड़ा—“वहा लोग पनीर तो बहुत खाते हैं पर पनीर की परांठा कोई नहीं बनाता ।”

यह छुटपन से उसकी आदतें थी । जब वह बड़ा रौ में हांता था, रोटी का पहला कौर तोड़कर मां के मुह में डाल देता था ।

“तू सात विलायत घूमकर भी वही का वही है” मा के मुह से निकला और मा की आंखों में पानी भर आया । भरी आंखों में वह कह रही थी—“तू आया है, सब कुछ फिर उसी तरह हो गया है ।”

वह, वह नहीं था । कुछ भी वह नहीं था, जाते वक्त जो कुछ था,

वह सब बदल गया था। उसन बाप की बात नहीं छेड़ी थी, सिफ उसके खाली पलंग की तरफ देखा था, और फिर झालें परे कर ली था। मा के दिन ब दिन मुरमात मुह की बात भी नहीं की थी। छोटे भाई की खर-खबर पूछी थी, पर मह नहा कहा था कि मा को भवेला छोड़कर उस दूतनी दूर नहो जाना चाहिए था। पर मा कह रही थी—सब कुछ फिर उसी तरह हो गया है

भटपट जा काई भुलावा पड जाए क्या हज है' उसने सोचा भी यही था। मा के मुह में भगनी रोटी का कोर भी इसीलिए डाला था।

उसने काई और भी मा की मरजी की बात करनी चाही। पूछा—
'भाभा कसा है ? तुम्ह पस द भाई है ?'

मा न जबाब नही दिया। सिफ सबाल-मा किया—“ मरा क्या था तू बिलायन से कोई लडकी ”

वह हस पडा।

‘बालता क्या नही ?

‘बिलायत की लडकिया बिलायत में ही भच्छी लगती हैं, सब बहा छोड आया हूँ।’

‘मैंने तो इस महीने पिछले दाना कमरे खाली करवा लिए थे। सोचा था तुम्हे जरूरत होगी।’

‘य कमरे किराय पर दिए हुए थे ?

छोटा भी चला गया था। घर बडा खाली था इसलिए पिछले कमरे बना दिए थे। जरा हाथ भी खुला हो गया था ।’

‘तुम्ह पसा की कमी था ? उसे परेशानी-सी हुई।

‘नही, पर हाथ में चार पैसे हां तो भच्छा होता है।

‘छाटे की तनख्वाह थोड़ी नही, वह

“पर वह भी सब परिवार वाला है आजकल में ही उसके घर ”

“सो मेरी मा दादी बन जाएगी...”

उसने मा को हसाना चाहा, पर मा कह रही थी—“तुझे तो कोई उजर नहीं था जो तू विलायत से कोई लड़की...”

वह मां को 'हंसाने के यत्न में था। इसलिए कहने लगा—“लाने तो लगा था पर याद आया कि तुमने जाते समय पक्की की थी कि मैं विलायत से किसीको साथ न लाऊ।”

उसे याद आया—जाने वाले दिन, वह लड़की जब मिलने आई थी, वह मा को अच्छी लगी थी। मा ने उन दोनों को इकट्ठे देखकर, ताकीद से कहा था—‘देख, कहीं विलायत से न कोई ले आना। कोई भी अपने देश की लड़की की रीस नहीं कर सकती...’

पर इस वक्त मा कह रही थी—“यह तो मैंने वैसे ही कहा था। तेरी खुशी से मैंने मुनकिर क्यों होना था। पीछे एक खत में मैंने तुझे लिखा भी था कि जो तेरा जी चाहता हो...”

“यह तो मैंने सोचा, तुमने ऐसे ही लिख दिया होगा” वह हस पड़ा। और फिर कहने लगा—“अच्छा, जो तुम कहो तो मैं अगली बार ले आऊंगा।”

“तू फिर जाएगा ?” मा धवरा-सी गई।

“वह भी जो तुम कहो तो, नहीं तो नहीं।”

उसे लगा, उसे आते ही जाने की बात नहीं करनी चाहिए थी। आते वक्त उसे एक यूनिवर्सिटी से एक नौकरी आफर हुई थी। पर वह इतने वरसों बाद एक बार वापस आना चाहता था। चाहे महीनो के लिए ही।

“जो तुम कहोगी तो नहीं जाऊंगा” उसने फिर एक बार कहा।

मां को कुछ तसल्ली आ गई। कहने लगी—“तू सामने होगा, बूल्हे मे आग जलाने की तो हिम्मत आ जाएगी, वैसे तो कई बार चारपाई पर से नहीं उठ जाता।”

मा, तुम इतनी उदास थीं ता छोटे के साथ, उसने घर

‘मैं यहाँ अपने घर आगयी हूँ। अब तू आ गया है मुझे और क्या चाहिए।’

उसको लगा मा बहुत उदास थी। और ‘माय’ उसकी उदासी का सम्बन्ध गिफ उसने प्रवेलपन से नहीं किमी और चीख से भी था।

गिहकी मे से माती धूप की लकीर दोबार पर बड़ी गाल-सी गिर रहा थी। उसने गिहकी के परदे को गरबाया। और उस गलीच का पीना रग ऐसे लगा जैसे निश्चित-सा होकर कमरे में सा गया हो।

‘तू चक गया हागा। कुछ सो ले मा ने कहा और मेड पर न प्लेटें उठाकर कमरे से जाने लगी।

नही मुझे मीद नहीं आई’ उसने हल्का सा झूठ बोला और कहा—
‘मैं तुम्हारे लिए एब-दो चीजें लाया हूँ देखू पूरी माती हैं कि नहीं।’

उसने सूटकेस खोला। एक गरम वाली ऊन की गाल थी पता जमी हल्की। मा के कंधों पर डालकर कहने लगा— ‘मह जाड़े की चीज है पर एक मिनट अपने ऊपर ओढ़कर दिखाओ। यह तुम्हें बड़ी अच्छी लगेगी।’

फिर उसने पर के स्लीपर निकाले। मा के परो में पहनाकर कहने लगा— ‘देखो कितने पूरे आए हैं। मुझे डर था छोटे न हो।’

‘इस उम्र में मुझे अच्छे लगेंगे?’ मा की आँखों में पानी-सा भर आया था।

बहु मा का ध्यान बटाने के लिए और चीजें दिखाने लगा। प्लास्टिक की एक छोटी-सी डिब्बी में कुछ सिक्के थे—इटला के लीरा यूगो स्लाविया के दीनार, बल्गारिया के लेवा, हंगरी के फॉरेंटस, रोमानिया के लेई जमनी के दीनार उसने सिक्कों को छनकाया और कहने लगा—

‘मा, तुमने कहा था न कि छोटे के घर बहुत जल्दी कोई बच्चा

‘हा हा, कहा था’ मा कमरे से जान के लिए उठावली-सी लगी।

“यह अपने भतीजे को दूगा ।”

और फिर उसने सूटकेस में से और चीजे निकाली — “छोटे के लिए यह कैमरा, और भाभी के लिए यह...”

मा रूआसी-सी हो गई ।

उसका हाथ रुक गया ।

“मां, क्या बात है, तुम मुझे बताती क्यों नहीं ?”

मा चुप थी ।

उसने मा के कन्धे पर हाथ रखा ।

मा को कोई कही कसूरवार लगता था । पता नहीं कौन । और सोच-सोचकर उसे अपना मुह ही कसूरवार लगने लगा था । उसने एक विवशता से उसकी तरफ देखा ।

“मा, तुम कुछ बताना चाहती हो, पर बताती नहीं ।”

“वह लड़की ”

“कौन-सी लड़की ?”

“जो तुम्हें उस दिन मिलने आई थी, जिसने तेरे लिए एक स्वेटर...”

“हा, क्या हुआ उस लड़की को ?”

“उसने छोटे के साथ व्याह कर लिया है ।”

मा के कन्धे पर रखा हुआ उसका हाथ कस-सा गया । एक पल के लिए उसे लगा कि हाथ ने कन्धे का सहारा लिया था पर दूसरे पल लगा कि हाथ ने कन्धे को सहारा दिया था ।

और वह हस पड़ा — “सो वह मेरी भाभी है ।”

मा उसके मुंह की तरफ देखने लगी ।

“मुझे खत में क्यों नहीं लिखा था ?”

“क्या लिखती ... यह उन्होंने लिखने वाली बात की थी ?”

“छोटे ने सिर्फ व्याह की खबर दी थी और कुछ नहीं लिखा था ।”

“दोनों पारमिन्दे तुम्हें क्या लिखते ।’

सुने सूटकेस के पास जो दूसरा बन्द सूटकेस था, उसपर उसका धावर कोट और वह स्वेटर पड़ा हुआ था जो उसने सुबह भाते बरत पहना था ।

वह एक मिनट स्वेटर की तरफ देखना रहा । स्वेटर गुच्छा-सा होकर अपने आपकी धावर कोट के नीचे छुपाता-सा लग रहा था ।

पांच बरस लम्बी सड़क

मेरे हाथ अब मेरे कानो के बचाव के लिए कुछ नहीं करते । शायद थक गए हैं, इसलिए । पर मेरे दोस्त ने कानो पर हाथ रख लिए । कहने लगा—“मैंने समझा था ऐसी आवाजें विल्लीमारा, वस्तियां की गली, श्रीर पापड़मंडी में ही आती है...”

मेरे कान मेरे होठों की तरह हस रहे थे ..

“यहा, अफसर लोगो की वस्ती मे भी ऐसा होता है ?” मेरा दोस्त उठकर शीशे की उस खिड़की को वन्द करने लगा, जिसमे से, पड़ोसियो के घर में से विल्लीमारां, वस्तियां की गली या पापड़मंडी के ख्याल जैसा कुछ मेरे कमरे मे आ रहा था ।

“एक फर्क शायद तूने नोट नहीं किया” मैंने इस सरकारी वस्ती को लोगो की साधारण वस्तियो से अलग करने के लिए कहा, “उन विल्लीमारा, या जोडेमारा गलियो में जो शोर उठता है वह देसी जवान में होता है, पर इस सरकारी वस्ती के गले में से जो कुछ निकलता है, वह अंग्रेजी में होता है...”

मेरे दोस्त को भी मेरी तरह हंसना पड़ा । कहने लगा—“तो इस-

लिए यह सुपोरियर^१ 'गोर है' और फिर उसने एक फिलासफर जसा मुह बनाकर कहा "यार नेगनल जबान से जो इह इनफीरिएरिटी^२ का ख्याल आता है तो फिर इटरनेगल जबान क्यों नहीं बरतते ? "

'इटरनेगल जबान सिफ चुप होती है, तेरा ख्याल है, उहे चुप रहना चाहिए / मुझे पूछना पडा ।

मेरे दोस्त ने एक फिलासफर की तरह सिर हिलाया ।

'बात यह है मुझे कहना पडा, 'इस जबान से इंसान बनता है पर समाज नहीं बनता ।'

मेरे दोस्त ने घूरकर मेरी तरफ देखा ।

मैंने उसकी त्योरी को अपनी आखा से उसके माथे पर से हटाया और कहा मेरा ख्याल है, इंसान की समाज चाहिए पर समाज को इंसान नहीं चाहिए इसलिए

'इसलिए मेरे दोस्त ने एक बार मेरी तरफ देखा और फिर एक बार खिडकी के शीशे की तरफ ।

यह समाज की आवाज है, जो गाने से टकरा रही है' मुझे हसी आ गई ।

मेरे दोस्त ने अपना एक हाथ माथे पर रखा, पर मुझे लगा जस उसन माथे पर हाथ मारा हो ।

मैंने बड़े धीरज से उसे कहा, 'मैं दूर नहीं जाता, इसी पास के घर की मिसाल देता हू । बहुत बरस नहीं हुए मुद्रिकल से पाच बरस हुए हैं यहां एक आदमी रहता था '

काई और किरायदार ?'

'और नहीं यही । पर तब यह सिफ एक चुपचाप आदमी होता

१ ऊच किरम का

२ हानता

था ”

“फिर ?”

“फिर वही जो मैंने कहा था कि इन्सान को समाज चाहिए...”

“यार, यह समा...” मेरा दोस्त बीच में कुछ बोलने लगा था, पर मैंने कहा, “तब यहा बहुत प्यारी चुप होती थी—घास के रंग जैसी हरी-सी चुप, आसमान के रंग जैसी नीली-सी चुप, सूरज के रंग जैसी सुनहरी-सी चुप, चांद के रंग जैसी दूधिया-सी चुप...”

“यार, तू शायरी करने लगा है . ” मेरा दोस्त हस पड़ा ।

“यह मेरा कसूर नहीं” मैंने कहा । और दोस्त के लगाए इल्जाम का जवाब देते हुए कहने लगा, “मुझे हमेशा चुप में बड़े रंग दिखते हैं, अपने जिस्म का बादामी रंग भी चुप में दिखता है, कपड़ों के शोर में मुझे वह रंग कभी नहीं दिखता... पर पता नहीं इस आदमी को यह सारे रंग क्यों नहीं दिखते थे ”

मेरे दोस्त ने फिर फिलासफर-सा मुह बनाया और कहने लगा, “चुप में दिखने वाला एक रंग कब्र का रंग भी होता है ।”

मुझे हमी आ गई, और मैंने कहा, “फिर मेरा ख्याल है जिन्हे चुप में यह सारे रंग नहीं दिखते, उन्हें सिर्फ कब्र का रंग दिखता है । इस मेरे पड़ोसी को भी जरूर वही दिखता होगा, तभी वह एक बार छुट्टी लेकर अपने गांव गया था, और जब वापस आया था, उसके साथ एक औरत थी । मुझे याद है, वह दोनों जब यहा पहुंचे थे, टैंकसी में से बातें करते उतरे थे... वह शायद मिलकर अपनी-अपनी चुप के कब्र जैसे रंग कां तोट रहे थे . ”

मेरा दोस्त मुस्करा पड़ा । पूछने लगा, “फिर ?”

“मेरा ख्याल है, कुछ दिनों पीछे उन्हें लगा कि छोटी-छोटी बातों में यह रंग नहीं टूट सकता । पहले वे दोनों बड़ी धीमी आवाज में बोलते

ये, फिर बहुत ऊचा-ऊचा बालने लगे ”

“फिर ?”

फिर मेरा ख्याल है कि दोनों को लगा—भावाजा से कुछ नहीं बनता । भावाजें ककरा की तरह होती हैं, इनसे चुप नहीं टूटती । सो दोनों ने कुछ पत्थर जसी चीजें ढूँढी । मद ने गालिया का पत्थर पकड़ लिया औरत ने रोने का ।

मेरा दास्त फिर मुस्कराया, और पूछने लगा, ‘ फिर ?’

‘ फिर दोनों ने सोचा कि चुप जसे दुश्मन के लिए वह दो जने काफी नहीं थे, सा उंहाने एक तीसरे का भी बन्दोबस्त किया । उनके बच्चे ने जब दिन रात गला फाड़ फाड़कर राना शुरू किया, तो मेरा ख्याल है उंह जरूर कुछ तसल्ली हुई होगी ।’

मरे दोस्त ने मरे कंधे पर एक हाथ मारा और कहने लगा— यह वास्तव में एक बहुत बड़ा हथियार था ।

पर यह हथियार डेढ़ बरस बाद खुड़ा ही गया । मैंने जवाब दिया, और बताया कि बच्चे ने रोना कम कर दिया था । ‘ मेरा ख्याल है उंहें फिर चुप से डर लगने लगा था । सो उन्होंने दूसरे बच्चे का बन्दोबस्त किया ।’

मेरा दोस्त खिलखिलाकर हस पड़ा । और पूछने लगा, “ फिर ?”

फिर क्या कोई और रंग हाता तो टूट जाता कब्र का रंग नहीं टूटता । उन्होंने चुप के मुकाबले पर बाकायदा एक भरती शुरू कर दी । पहले एक नोकर रखा फिर एक भाया । और बारी बारी दोनों का गालिया देकर दिन रात अपनी चुप को तोड़ते रहे । पर इंसान का गला आखिर इंसान का गला है पक जाता है । सो वे हारकर एक कुत्ता ले आए ।

और मैं कुर्सी पर से उठकर वह खिड़की खोल दी, जा अभी थोड़ी

देर पहले मेरे दोस्त ने घबराकर वन्द कर दी थी।

“एक औरत की, एक मर्द की, दो बच्चों की, दो नौकरों की, और एक कुत्ते की—ये सात आवाजे हैं। किसी राग के सात स्वरो की तरह।” मैंने अपने दोस्त को कहा और पूछा, “तू पहचान सकता है, यह कौन-सा राग है?”

मेरा दोस्त हस पड़ा। कहने लगा—“समाज राग” और फिर एक फिलासफर जैसा मुह बनाकर कहने लगा, “जिन्दगी की चुप को तोड़ने के लिए यह राग बहुत जरूरी है। यह राग...” वह एकदम चुप हो गया, पता नहीं क्या कहने वाला था।

फिर सात स्वरो को, जो एक बार एक सास में वज रहे थे, कुछ अलग करता हुआ कहने लगा—“यार, यह कमाल है। आदमी शायद सिर्फ अंग्रेजी में बोल रहा है और औरत कभी अंग्रेजी, कभी देसी जवान में...नौकर सिर्फ पहाड़ी जवान में बोल रहे हैं ..”

“चुप के खिलाफ मिलकर जूझना चाहिए” मेरी हसी अब रूआसी हो गई थी। मुश्किल से इतना कहा, “मेरा ख्याल है, यह इंटिग्रेशन का एक सेमिनार है सबके सब उस कुत्ते की आवाज में...मेरा मतलब है उसकी हा में हा मिला रहे हैं ..”

ये, फिर बहुत ऊँचा-ऊँचा बोलने लगे “

फिर ?”

‘ फिर मेरा ख्याल है कि दोना का लगा—आवाजा स कुछ नहीं बनता । आवाजें ककरा की तरह होती हैं, इनसे चुप नहीं टूटती । सो दाना ने कुछ पत्थर जसी चीजें ढूँढ़ी । मद न गालिया का पत्थर पकड़ लिया, औरत ने रोने का ।

मेरा दोस्त फिर मुस्कराया, और पूछने लगा, फिर ?”

“फिर दाना न भावा कि चुप जैम दुश्मन क लिए वह दो जने काफी नहीं थे सा उन्होंने एक तीसरे का भी बंदाबस्त किया । उनके बच्चे ने जब दिन रात गला फाड़ फाड़कर रोना शुरू किया, तो मेरा ख्याल है उहे जरूर कुछ तसल्ली हुई होगी ।’

मेर दास्त ने मेर बंध पर एक हाथ मारा और कहन लगा—“यह वास्तव म एक बहुत बड़ा हथियार था ।

पर यह हथियार डेढ बरस बाद लुडा हो गया, मैंने जवाब दिया और बनाया कि बच्चे ने रोना कम कर दिया था । मेरा ख्याल है, उह फिर चुप से डर लगने लगा था । सो उन्होंने दूसर बच्चे का बंदाबस्त किया ।’

मेरा दोस्त खिलखिलाकर हस पडा । और पूछने लगा, “फिर ?

‘ फिर क्या, कोई और रग हाता तो टूट जाता कब्र का रग नहीं टूटता । उन्होंने चुप क मुकाबले पर बाकायदा एक भरती गुरु कर दी । पहन एक नौकर रखा फिर एक आया । और बारी-बारा दाना को गालिया दकर दिन रात अपनी चुप को तोड़ते रहे । पर इमान का गला आखिर इतान का गला है थक जाता है । सो वे हारकर एक कुत्ता ले आए ’

और मैंने कुर्सी पर से उठकर वह बिडकी खोल दी, जा अपनी थोड़ी

देश पहले मेरे दोस्त ने घबराकर बन्द कर दी थी।

“एक औरत की, एक मर्द की, दो बच्चों की, दो नौकरो की, और एक कुत्ते की—ये सात आवाजे है। किसी राग के सात स्वरो की तरह।” मैंने अपने दोस्त को कहा और पूछा, “तू पहचान सकता है, यह कौन-सा राग है?”

मेरा दोस्त हस पड़ा। कहने लगा—“समाज राग” और फिर एक फिलासफर जैसा मुह बनाकर कहने लगा, “जिन्दगी की चुप को तोड़ने के लिए यह राग बहुत जरूरी है। यह राग...” वह एकदम चुप हो गया, पता नहीं क्या कहने वाला था।

फिर सात स्वरो को, जो एक बार एक सास में बज रहे थे, कुछ अलग करता हुआ कहने लगा—“यार, यह कमाल है। आदमी शायद सिर्फ अंग्रेजी में बोल रहा है और औरत कभी अंग्रेजी, कभी देसी जवान में...नौकर सिर्फ पहाड़ी जवान में बोल रहे हैं...”

“चुप के खिलाफ मिलकर जूझना चाहिए” मेरी हसी अब स्यासी हो गई थी। मुश्किल से इतना कहा, “मेरा ख्याल है, यह इंटेलिजेंस का एक सेमिनार है सबके सब उस कुत्ते की आवाज में...मेरा मतलब है उसकी हा में हा मिला रहे हैं...”

पाच बरस लम्बी सड़क

अलमारी का शाना बहुत लम्बा था—उमकें बंद जितना ।

वह अपने कोट के बटन खोलन लगा था, उसका हाथ बहुत बटन पर हो रुक गया जब सींगे के बीच वाले हाथ ने उसका हाथ पकड़ लिया हो ।

“कपड़े नहीं बदलाने ?” औरत की आवाज आई ।

मद हस-सा गया । सींगे में भी कुछ हिल-भा गया ।

“तुमने पिक्चर आफ डोरियन ग्र पड़ी है ?” मद न धृष्ट ।

“पिक्चर आफ डोरियन ग्रे ?”

“आम्बर वाइन्ड की सबसे मशहूर उपमास ।

“मेरा ख्याल है कालज के दिना में पड़ी था पर इस वक्त पाद नहीं शायद उसमें एक पेंटिंग की कोई बात थी ।”

“हा, पेंटिंग की । वह एक बड़े हसीन आदमी की पेंटिंग था ।”

“फिर शायद वह आदमी हसीन नहीं रहा था और उसका माथ हो उसकी पेंटिंग बदल गई थी । कुछ ऐसी ही बात थी ।”

“नहीं वह उसकी खिलती दाढ़ी के साथ नहीं बदली थी, उसके मन की हानत में बदली थी । रोज बदलती थी ।”

“अब मुझे याद आ गया है । आदमी उसी तरह हसीन रहा था, पर पेंटिंग के मुह पर झुर्रिया पड़ गई थी... ।”

“उसके मन की सोचो की तरह ।”

“अब मुझे सारी कहानी याद आ गई है ।”

“मेरा ख्याल है, यह शीशा . ”

“यह शीशा ?”

“सामने शीशे में देखो, मेरी शक्ल बदल गई है ।”

“आज पार्टी में तुमने बहुत पी थी ।”

“नहीं, बहुत नहीं, मैं अभी और पीना चाहता हूँ ..यहा अकेले, इस शीशे के सामने बैठकर . और देखना चाहता हूँ—यह शक्ल और कितनी बदल सकती है ...”

औरत परे खड़ी थी, उधर पलंग के पास । इधर मर्द के पास आई, शीशे के पास । उसकी आवाज में दिलजोई थी, कहने लगी—“आज की पार्टी में कोई सबसे हसीन आदमी अगर था, तो वह सिर्फ तुम । तुमने उनकी शक्ले नहीं देखी ? उन सबकी, जिन्हे तुमने पार्टी पर बुलाया था . वह मास के ढेर से...”

“मैं उनकी बात नहीं कर रहा सिर्फ अपनी कर रहा हूँ ।”

“हा, देख लो शीशे में—तुम्हारा वही चन्दन की गेली जैसा जिस्म । माथा, आखे ...नाक...जैसे खुदा ने फुसंत में बैठकर गढे हो . ” औरत ने कहा । वह अभी भी दिलजोई की रौ में थी ।

“यह शब्दावली शायरो को लिए रहने दो...” मर्द खीझ-सा गया ।

“मेरा ख्याल है तुम थक गए हो । वैसे भी रात आधी होने को है . ”

“पर तुम शीशे में क्यों नहीं देखती ? देखने से डरती हो ?”

“शीशे में कुछ और हो जाएगा ?”

“हो जाएगा नहीं, हो गया है ।” .

‘कहाँ ? कुछ भी नहीं हुआ ’

अभी हुआ था मैं खुद देखा था मैं जब हसा था सीने में मेरा
मही मुह रो पड़ा था यह गीगा डोरियन पे की पेंटिंग की तरह

मैं गुसलखान में से नाइट सूट ला देती हूँ, तुम कपड़े बदल ला ।’

कपड़े साम्यता की निशानी होते हैं, इस निशानी के बगैर मैं क्या
हाऊंगा तुमने ही कहा था कि इस पार्टी के लिए मुझे नया सूट सिल
वाना चाहिए ’

‘मैं ठाक कहा था वह सब तुमसे बड़े इम्प्रेस हुए लगते थे ’

‘इसलिए मैं यह सूट उतारना नहीं चाहता ।’

‘पर अब घर में कोई भी नहीं ।’

अभी मैं हूँ

श्रीरत को अब यकीन हो गया था वह कि अब वहक गया है इसलिए
बाली नहीं ।

मन ने ही कहा— ‘उस वक़्त मैंने उनको इम्प्रेस किया था, पर इस
वक़्त अपने आपको करना है, इसलिए अभी यह सूट नहीं उतार सकता ।’

श्रीरत चुप थी ।

कुछ हिस्सा बची है ? मद न पूछा ।

श्रीरत के मुह पर मे एक माच की परछाई गुजर गई । परछाई का
पसीने की तरह पोछकर बोली वह— ‘नहीं ।’

‘मरा ख्याल है, तुम्हें कूठ बोलने का अभी डग नहीं आया ।’ मर्दे
हस दिया ।

‘पर इस वक़्त मैं श्रीरत नहीं पान दूंगी ।’

‘सिर्फ एक गिलास ’

‘नहीं ।’

‘तुमने उह किसी गिलास के लिए मना नहीं किया था ।’

“वे गेस्ट थे...”

“रिस्पेक्टेबल स्पोर्ट...रिस्पेक्टेबल सिर्फ वे थे, मैं नहीं ?”

“मैंने रिस्पेक्टेबल नहीं कहा, सिर्फ गेस्ट कहा है,”

‘तुम मुझे भी अपना गेस्ट समझ लो...’

‘क्या ?’

“यह घर तुम्हारा है, मैं तुम्हारा गेस्ट हूँ,”

“यह घर सिर्फ मेरा है ?”

“घर सिर्फ औरत का होता है।”

औरत को इस वक्त कुछ भी कहना ठीक नहीं लगा। उसे लगा कि इस वक्त सिर्फ सो जाना चाहिए। वह चुपचाप गुसलखाने में गई, और मर्द का नाइट-सूट लाकर, पलग की बाहो पर रख दिया।

मर्द ने कमरे के हल्के नीले आयल पेंट की तरफ देखा, पलग की रेशमी सलेटी चादर की तरफ, फिर टेबल लैम्प के आसमानी शेड की तरफ .. और उसका जी चाहा, वह औरत से कहे—इस कमरे का सारा कुछ वरसों से उसकी कल्पना थी। इस कमरे की भी और बाहर के बड़े कमरे की भी .. इस सब कुछ को चाहती वह खुद कहती थी कि उसके दफ्तर से उसे कोई वास्ता नहीं, पर अपना घर वह अपनी मरजी से बनाएगी, घर औरत का होता है...

सिर उसने नाइट-सूट की तरफ देखा। और सिर्फ इतना कहा—“थू आर ए वडरफुल होस्ट ..आई मीन होस्टेस...”^१

औरत अभी भी चुप थी।

सिर्फ वहीं कह रहा था—“मेरी मेहरवान, अब एक गिलास व्हिस्की दे दो।”

औरत को लगा कि इस वक्त गिलास वाली बात को टॉला

१४० पाच बरस लम्बी सड़क

नहीं जा सकता। वह बाहर के कमरे में गई और कुछ मिनटों के बाद उसने एक गिलास लाकर मेज पर रख दिया।

‘यू आर रीयली ए डालिंग।’ मद ने हिस्की के पहले नहीं पर तीसरे घूट के साथ कहा।

भारत को कुछ याद आया—और वह खोल मा गई— मुझे यह याद अच्छे नहीं लगता।’

क्यों?’

आज की पार्टी में बिल्कुल यही गन्ध तुम्हारे एक मेहमान ने तुम्हारी सेक्रेटरी को कहे थे।

पर वह नाराज नहीं हुई थी।

वह सेक्रेटरी है मैं बीबी हूँ।

‘यह फक कसा लगता है?’

डिस्गस्टिंग^१।

‘डिस्गस्टिंग बीबी होना या कि सेक्रेटरी होना’

मेरे ख्याल में सेक्रेटरी होना।

यू आर राइट।

मद ने हिस्की का घूट भरा और कहने लगा, एक मरिड भारत की पाजीगन सचमुच बड़ी शानदार होती है। वह जब चाहे नाराज हो सकती है। जिस बात पर और जब चाहे पर बेचारी सेक्रेटरी इस तर्ज का मतलब?

‘यह तर्ज नहीं।

फिर यह क्या है?’

एक फवट।’

१ तुम सच में थिय हो।

२ छुपित

“उससे बड़ी हमदर्दी है ?”

“उसके साथ नहीं, सिर्फ उसके सेक्रेटरी होने से ।”

“इसीलिए उसकी हर दूसरे महीने तरक्की हो जाती है ?”

“यह तरक्की नहीं डियर, यह रिश्त है । सिर्फ यह रिश्त का नया तरीका है ।”

“किस चीज की रिश्त ?”

“हमारी एजेन्सी को जिस सेठ ने अपने मिल का एडवरटाइजिंग एकाउंट दिया है, यह उसकी शर्त थी... उस लडकी की तरक्की भी उसी की शर्त है...”

“यह उस सेठ की...”

“ए कैप्ट विमैन ।”^१

“इट इज आल डिस्गस्टिंग ?”^२

“येस, इट इज आल डिस्गस्टिंग ।”

“पर तुम्हे उससे हमदर्दी किस बात की है ?”

“क्योंकि मैं उसका हमपेशा हू ।”

“क्या मतलब ?”

“हम सब... सब... उसके हमपेशा है...”

“किस तरह ?”

“वी आर नॉट मैरिड टु अवर वर्क... वी आर आल लाइक कैप्ट विमैन ...”^३ मर्द हसा फिर कहने लगा—“आज की पार्टी से भी यह जाहिर था । मैंने उनको खुश करने के लिए यह सब कुछ किया था । पाच लाख एक साल के बिजनेस का सवाल था .”

१. रखैल

२. यह सब बड़ा घृणित है ।

३. हमारी गादी अपने काम से नहीं हुई है हम सब रखैलों की तरह हैं ।

मद ने गिहस्की के गिलास का आखिरी घूट भर, सींग की तरफ देखा। पता नहीं उसे क्या नज़र आया उसने एक बार आगे बढ़-भी कर ली। फिर खोपीं लीं वे उस सींगे की तरफ नज़ा, खाली गिलास की तरफ दल रही थीं।

‘मेरी मेहरबान, एक गिलास और।’

“नहीं, और नहीं।”

‘भाज जाने-गुलामी है।’

भोरत ने अपनी घबराहट का माथे पर से पसोने की तरह पाछा।

‘देख मेरी जान भाज की पार्टी ने भगल साल का बिजनेस भी पक्का कर दिया है। इसका मतलब है—भगले साल भी पाँच लाख का बिजनेस। इसलिए मैंने नया सूट पहना था वे औरतें मेरा मतलब है कस्ट विमन इसी तरह नई साड़ी पहनती हैं फिर सारा वक्त दिल फरेब भातें उन्हें किसी भी बात से नाराज होने का हक नज़ा हाना मैं भी किसी बात से नाराज नहीं हुआ।’

भोरत ने मर् के पास होकर उसके कोट के बटन खाले। बटन खोलत हुए वह काफी देर तक उसकी छाती के पास खड़ी रही। शायद मद के हाथ की किसी हरकत का इंतज़ार कर रही थी।

रात कमरे में भी भड़ोल थी दूर परे तक भी भड़ाल थी। मर् के अंगों की तरह।

और फिर अचानक एक कुत्ते के भौंकने की आवाज़ आई। और भोरत को लगा—उसकी छाती में भी कुछ था जो इस वक्त

कुत्ते के भौंकने की आवाज़ बायें हाथ वाली कोठी की तरफ से आई था। फिर भगल मिनट दायें हाथ वाली कोठी की तरफ से भी आई। आमद जवाब की मूरत में।

‘ब्लाट ए डुइट’ मद ने खाली गिलास की तरफ देखा, और भोरत

को हाथ से परे करता हुआ, बाहर के कमरे में से और बिस्की लाने के लिए चला गया।

गिलास में बर्फ का एक टुकड़ा शायद उसने ऊपर से और डाला था, गिलास छलक-सा गया था। गिलास को छलकने से बचाने के लिए उसने दहलीज ही में खड़े होकर एक घूट भरा, और फिर कमरे में आता हुआ कहने लगा—“आई एम सैलीब्रेटिंग दिस ड्रिंक।”^१

कुत्ते भौक रहे थे—वारी-वारी।

“दिस इज फार द हेल्थ आफ डॉग्ज़...^२

उसने गिलास में से एक घूट भरा।

औरत ने घबराकर पहले कमरे की बाईं दीवार की तरफ देखा, और फिर दाईं की तरफ। बाहर भौकते कुत्तों की आवाजों में से, एक आवाज बाईं दीवार से टकरा रही थी, एक दाईं से।

“रात को सिर्फ ड्रिंक होता है।” मर्द हस-सा पड़ा और कहने लगा, “पर सवेरे पूरा कोरस होता है। बाये हाथ वाली कोठी में कोई अमरीकन है। उसके सारे कमरे एअरकंडीशंड हैं, इसलिए उसे कोई फर्क नहीं पड़ता, पर सुबह के वक्त उसका खानसामा, उसका वैरा, और कोठी का जमादार, जिस तरह एक-दूसरे पर भौकते हैं, लगता है कोठी में एक नहीं पूरे चार कुत्ते भौक रहे हैं।”

“डार्लिंग, तुम सोने की कोशिश क्यों नहीं करते?” औरत ने, थक गई औरत ने, कहा।

“आई एम ड्रिंकिंग फार दी हेल्थ आफ डॉग्ज़...”

औरत चुप-सी पलंग की बाही पर बैठ गई।

“तुमने मेरी पूरी बात नहीं सुनी। मैं तुम्हें बता रहा था सुबह,

१. मैं इस युगलगान कांजशन मना रहा हूँ।

२. यह जाम कुत्तों की सेहत के लिए।

कर खड़ा हो गया। फिर शीशे के सामने आया—“देख सामने। यह मैं बूटो के तसमे खोलता हूँ, उसमे देख किसके पैर है—माई गाड। निरे उस सेठ के पैर यह शीशा आज डोरियन ग्रे की पेंटिंग की तरह ..”

“इस वरस यह एक सेठ के पैर है, पिछले वरस यह जरूर एक बैकर के पैर होंगे। पिछले वरस मैंने यह शीशा नहीं देखा था। इस तरह नहीं देखा था .. और उससे पिछले वरस...” मर्द ने एक बार बाँखलाकर औरत की तरफ देखा, और पूछा, “कितने वरस हुए हैं ? जिस वरस मैंने तुम्हारे साथ व्याह किया था, उसी वरस ..”

“सिर्फ पाच वरस...” औरत ने धीरे से कहा।

“और सिर्फ पाच वरसों मे मेरी शकल बदल गई है ? और पाच मे या और पाच मे यह शकल ..”

“तुम्हारी शकल उसी तरह है।” औरत ने कहना चाहा। पर कहा नहीं। पहले भी वह यह बात कह चुकी थी। कोई फर्क नहीं पड़ा था।

“तुम चुप क्यों हो ?” मर्द ने अचानक पूछा।

औरत फिर भी नहीं बोली।

“व्हाई डोट यू वार्क लाइक ए डॉग ”

औरत के मन मे एक बचैनी-सी हुई। उसे लगा कि वह सचमुच कुछ कहना चाहती थी—कहना नहीं, एक कुत्ते की तरह... और औरत ने अपनी छाती पर एक हाथ रख लिया। उसे लगा, उसका छाती धँक रही थी।

“तुम अब भी चुप हो, उस वक्त भी चुप थी...” अचानक मर्द ने कहा।

“उस वक्त ? किस वक्त ?” औरत चौक-सी गई।

मर्द फिर हस-सा पड़ा। कहने लगा—“तुम्हारा ख्याल है, मैंने देखा नहीं था ? जिस वक्त उस सेठ ने तुमसे हाथ मिलाया था, कहा था, ‘थैंक

यू मैडम 'और उसने तुम्हारा हाथ भींचा था तुम्हारी तरफ देसने हुए उसकी नजर एक गिबारी कुत्ते की तरह "

औरत कुछ देर मद की तरफ दसती रही, फिर कहने लगी— एक हमार पहले घर की पड़ोसिन थी, उसका मद घाए तिन घर मे एक नई औरत लाता था। यह हमें गा घुप रहती थी। मुझे भी कुछ ऐसा ही लगा था उस बात का हम बात से कोई सम्बन्ध नहीं पर फिर भी कुछ इसी तरह लगा था मैंने साचा मेर कुछ बोलन से तुम्हारा बाराबार

औरत न धाँखो म घाए हुए पानी को पसीन की तरह पोछा। 'मैं भी घुप रहा था' मद ने कहा और मेज पर रत्ता हुआ गिलास फिर हाथ म पकड़ लिया। गिलास को धाँखिरी घूट तक पीता हुआ कहने लगा— 'इट इज फार भाल द डॉग्ज'—द मद वस द इटिंग वस द बाकिंग वस ऐंड 'मद न पहले मुसकराकर औरत की तरफ दला, फिर क्षीण म और कहा— 'ऐंड द साइलेंट वस '

१ यह नाम सारे कुत्तों के लिए है पागल कुत्ता के लिए शिंकार करने वाला कुत्ता के लिए भौंकने वाले कुत्तों के लिए और
२ और उन कुत्तों के लिए जो घुप रहते हैं

पांच बरस लम्बी सड़क

उसे अपनी छाती में शहद का एक छत्ता-सा लगा हुआ लगता । उसकी सोचें शहद की मक्खियों की तरह उड़ती, बड़े अजीब फूलों को सूघती, और बड़ा अजीब शहद जोड़ती ।

कई बार वह हाथ मारकर सोचों को उड़ाता, उनका जोड़ा हुआ शहद पीता । पर कई बार उसकी सोच की कोई मक्खी उसके अपने ही हाथ पर काट लेती । वह एक हाथ से दूसरे हाथ में से मक्खी का डक निकालता रहता ।

पर कई डक बहुत गहरे होते हैं । हाथ को सूजन चढ़ती जाती है, डक नहीं निकलता । पिछले दिनों में एक ऐसा ही डक, उसे बहुत दिनों तक दुखी करता रहा था—मायकोवस्की ने सुसाइड क्यों किया ?

मायकोवस्की की नज़्मों का शहद पीते हुए, एक दिन अचानक उसे इस सोच ने डक मार दिया था ।

इस तरह की एक सोच ने उसे जर्मनी में भी डक मारा था—एक शैलिंगी में उसने सुभाषचन्द्र बोस की आदमकद तस्वीर देखी थी, और उसकी आंखें तड़पकर सूजने लगी थी—सुभाषचन्द्र बोस आज जीता

१४८ पाच बरस लम्बी सडक

क्या नहीं ?

आज भी उसके हाथ पर एक सूजन चढ़ रही थी कि भागिर अपने कमरे की एक चाबी उसने एक लडकी को क्यों दी हुई थी ?

इस एक मक्खी का डक उसने कई बार छाया था, बहुत बरस हुए जब उसने अपने कमरे की एक चाबी उस लडकी को दी थी ।

उस दिन वह एक नरम पड़ रहा था उसके दफतर में काम करने वाली एक लडकी उसका दरवाजा खटकाकर उससे कोई किताब मागने आई थी पहले भी आती थी पर उस दिन उसने उस लडकी को वह नरम सुनाई थी—

क्या मैं 'याह कर लू ? क्या मैं अच्छा बन जाऊ ? अचानक उसने नरम की पहली पक्ति पढ़ी थी । लडकी कीली हुई सी खड़ी रह गई थी । और उसने आग नरम पढ़ी थी सबसे नजदीक एक पड़ोसिन लडकी है एक जिन में उसे कहूंगा कि वह कुछ महसूस करे क्योंकि कुछ महसूस करना एक अच्छी बात है फिर वह मुझे अपने मा बाप से परिचित करवाने के लिए ल जाएगी । उस दिन मैं अच्छी तरह बाल सवारुंगा टाई से गल को घाटूंगा और एक अजनबी कमरे में जाकर एक पुराने साके पर बैठ जाऊंगा और फिर सारा कुटुम्ब मरी तरफ देखेगा और सोच विचार करेगा

उस नरम का सुनती हुई लडकी ने कुछ नहीं कहा था । सिर्फ हस दी थी । वह नरम पड़ता रहा था फिर मा बाप कहेंगे अच्छा तू हमारी बेटी से 'याह कर ले हम बेटी गवा नहीं रहे हैं बल्कि एक बेटा पा रहे हैं । और फिर वह ब्याह रचाया जाएगा ।

फिर ? नरम का सुनते हुए लडकी ने कहा था ।

फिर सब बड़े-बूढ़े इकट्ठे हो जाएंगे, और फिर सबकी आँखें खाने

की मेज की तरफ घूरेगी। बड़े पकवानों की खुशबू उनके नथनों में घुसेगी, और शराब के इन्तज़ार में वह होठों पर जीभ फेरेगी...

नज़्म सुनती हुई लड़की हस पड़ी थी, और उसने पूछा था—
“फिर ?”

“फिर पादरी मेरी तरफ देखेगा, सोच रहा होगा कि आज तक यह आदमी एक औरत के जिस्म के बिना कैसे दिन गुज़ारता होगा, और फिर मुझमें कहेगा, ‘तुम अब से इस औरत का जिस्म कानूनी तौर से चरत सकते हो’ ”

नज़्म सुनती हुई लड़की ने कहा कुछ नहीं था, सिर्फ़ हुकारा-सा भरा था।

उमने मेज की तरफ हाथ करके पैंकेट में से एक मिगरेट निकाला था और उसे जलाकर नज़्म पढ़ने लगा था—“फिर मैं ब्राइड को धूमने के लिए आगे बढ़ूंगा, ऐसे, जैसे कमरे के कोनों में खड़े लोगों ने मुझे धक्का देकर आगे कर दिया हो...”

नज़्म की अगली पकितिया उससे जल्दी से अनूदित नहीं हुई थी, उसने उन्नी तरह पढ़ दी थी, “ऐड इन देयर आइज यू कुड भी मम ऑव-सीन हनीमून गोइंग आन...”

नज़्म सुनती हुई लड़की की काली आंखों में एक ग्लानि-मी आई थी और उसे नज़्म सुनाते हुए लगा था कि यह नज़्म उस लड़की को नहीं मुतानी चाहिए थी। वह हाथ में पकड़ी हुई किताब को मेज पर रखने लगा था, जिस वक़्त लड़की ने जोर देकर कहा था कि वह सारी नज़्म सुनना चाहती है। और उसको लगा कि काली आंखों में भी वह ग्लानि थी, जो नज़्म में मर्द की भूरी आंखों में थी। इसलिए वह नज़्म आगे पढ़ने लगा था।

‘फिर नियागरा फाल के बिनाचे पर हनीमून मनाने जाऊगा। सब वही बात है। होटल के सब कमरा में सिर्फ राविन्द बोविया और फल तथा चाकलट हान हैं। और सब उस रात एक सी ही बात करते हैं। होटल के बलक की भी पता होता है कि सब अपने कमरा में उस रात’

नरम सुनती हुई लड़की खिलखिताकर हस पड़ी थी। ‘ए बल रिन्न पोयम’। उसने कहा था और किताब के पास झुककर उस नरम के शामर का नाम पढ़ा था—‘येगरी बारसो’।

लाडकी की समझ पर उसका अविश्वास कुछ विश्वास बन गया था और वह आगे नरम पढ़ने लगा था। ‘और फिर होटल के बलक की आला में दखता मैं चीख सा पड़ूंगा—यह हनीमून मुझसे नहीं हागा। और मैं नियागरा फाल के नीचे काली गफा में धुस जाऊंगा। मैं एक मंड हनीमूनर। और गुफा में बैठकर मैं इस ‘माह की लाडने की तरकीब’ साखूंगा। एक समाधि सी लगाऊंगा—म ए सेंट आफ डाइवोम।

लड़की बहुत ध्यान से नरम सुन रही थी। उसने लड़की से मजाक किया—‘बोंट यू लाडक टु वरगिष ए सेंट आफ डाइवोम?’

लड़की हस दी थी। जवाब में उसने एक झपूरा सा वाक्य भी कहा था ‘आई मिक आई एम आलगेडा’^१ पर फिर उसने वाक्य की तरफ से ध्यान हटाकर नरम की तरफ कर लिया था और कहा था—
‘आग नरम मुनामा’

वह नरम सुनान लगा था पर मुझे ब्याह करना चाहिए एक अच्छा आत्मा बनना चाहिए। यह कितना अच्छा हागा जब मैं गाम का घर लौटूंगा आग लापूंगा भर कमरे की लिडकी बाह लेनो की आर नहा सुनगा, मैं गटर की किसी इमारत की सानवीं मंजिन के एक छाटे

१ तुम तब तक के मन का पूजा करना नहीं चाहोगा।

२ मेरा स्थान है मैं रहल हूँ।

और वदवूदार कमरे में बैठूंगा, और मेरी बीबी आलू छीलती हुई कोई अच्छी नौकरी ढूँढने को कह रही होगी... मेरे बच्चे नाक पोंछ रहे होंगे और मेरे बूढ़े पड़ोसी मेरे कमरे में टेलीवीजन देखने के लिए आ रहे होंगे...”

यह नज्म सुनती हुई लड़की हसी से दोहरी-सी हो गई थी। और उसने आगे नज्म पढ़ी थी, “नहीं, मैं ब्याह नहीं कर सकता, कभी भी नहीं करूंगा पर यह भी तो हो सकता है कि मेरा ब्याह किसी बड़ी अमीरजादी के साथ हो जाए और नाजुक-सी, पीली-सी लड़की, काले दस्ताने पहनकर, मेरे साथ शहर की सबसे ऊँची इमारत पर खड़ी, सिगरेट पीती रहे, और सारे शहर का दृश्य देखती रहे। पर नहीं। मैं उस खिड़की में नहीं खड़ा हो सकता जहाँ सपने कैद होते हैं।”

उसने देखा—नज्म सुनती हुई लड़की का चेहरा बड़ा सजीव-सा हो गया था। गम्भीर भी। इसीलिए उसने नज्म जारी रखी थी, “पर मुहब्बत वाली बात तो मैं भूल ही गया। यह नहीं कि मुझमें इश्क करने की हिम्मत नहीं, पर मुझे पता है कि इश्क को कुछ दिनों बाद टूटी हुई जूती की तरह घसीटना पड़ता है।”

उसको लगा कि नज्म सुनती हुई लड़की का मुँह कुछ पीला हो गया था। उसे हमी-सी आई और उसने आगे नज्म पढ़ी, “पर यह भी क्या हुआ कि मैं सारी उम्र अकेला एक कमरे में बैठा हुआ बूढ़ा हो जाऊँ, और सारी दुनिया ब्याही जाए, और एक अकेला मैं ही कुआरा रह जाऊँ मेरा ब्याल है, दुनिया में कहीं एक मेरे योग्य औरत का अस्तित्व भी संभव है, इसी तरह जैसे मेरा अपना संभव हुआ है। मैं सिर्फ उसके साथ ब्याह करूँगा। वह उस ‘शी’ की तरह होगी जो दो हजार वरस तक अपने इजिप्शियन आशिक का इन्तजार करती रही...”

नज्म सुनती हुई लड़की ने हाथ आगे करके उससे किताब मांगी थी।

‘ फिर नियागरा फाल व किनारे पर हनीमून मनाने जाऊगा । सब वहा जान है । होटल के सब कमरा म सिफ खाविद बाबिया और फल तथा चाकलेट हात है । और सब उम रात एक् यी ही बात करते है । होटल व बलकों का भी पता होता है कि सब अपने कमरा म उम रात

नजम मुनगी हुई लडकी तिलखिनाफर हम पडी थी ए वेन रिग्न पायम ! उमने कहा था और किताब व पास भुक्कर उस नजम के गायर का नाम पढा था—‘येगरी कारसा ।

लडकी की समझ पर उसका अविश्वास कुछ विश्वास बन गया था, और वह आगे नजम पढ़न लगा था, ‘ और फिर होटल के बलक की आग्या म दखता मैं चाख-सा पड़ूंगा—यह हनामून मुक्त नहीं हागा । और मैं नियागरा फाल व नीच कानी गया म धुस जाऊगा । मैं, एक् मड हनामूनर । और गुफा म बठकर मैं इस ब्याह का लाडन का तरकाब साबूंगा । एक् समाधि सा लगाऊंगा—म ए सेंट आफ डाइवोस ।

लडकी बहुत ध्यान स नजम मुन रहा थी । उसने लडकी स मन्नाज किया—‘ वोट यू लाइन टु वरगिप ए सेंट आफ डाइवाम ? ’

लडकी हम दी थी । जवाब म उमने एक् अतूरा-गा वाक्य भी कहा था ‘ आई पिब आई एम घालरेडी ’ पर फिर उमने वाक्य की तरफ म ध्यान हटाकर नजम का तरफ कर लिया था और कहा था—
आगे नजम मुनासा

वह नजम मुनाने लगा था पर मुझे ब्याह करना चाहिए एक अच्छा आदमा बनना चाहिए । यह कितना अच्छा हागा जब मैं गाम का घर लौंगा आग लादूंगा मरे कमर का मिडकी खाह खेनों का घर नज, मुनगी मैं गहर की बिमा हमारन की सानवीं मजिल व एक छाटे

१. तुम लवक व मल का पूजा करता नहीं बहावा ?

२. मरा मरन है मे पदल हा

और वदवूदार कमरे में बैठूंगा, और मेरी बीबी आलू छीलती हुई कोई अच्छी नौकरी ढूँढने को कह रही होगी. मेरे बच्चे नाक पोछ रहे होंगे और मेरे बूढ़े पड़ोसी मेरे कमरे में टेलीवीजन देखने के लिए आ रहे होंगे.. ”

यह नज्म सुनती हुई लड़की हसी से दोहरी-सी हो गई थी। और उसने आगे नज्म पढ़ी थी, “नहीं, मैं ब्याह नहीं कर सकता, कभी भी नहीं करूंगा पर यह भी तो हो सकता है कि मेरा ब्याह किसी बड़ी अमीरजादी के साथ हो जाए और नाजुक-सी, पीली-सी लड़की, काले दस्ताने पहनकर, मेरे साथ शहर की सबसे ऊँची इमारत पर खड़ी, सिगरेट पीनी रहे, और सारे शहर का दृश्य देखती रहे। पर नहीं। मैं उस खिड़की में नहीं खड़ा हो सकता जहाँ सपने कैद होते हैं . ”

उसने देखा—नज्म सुनती हुई लड़की का चेहरा बड़ा सजीव-सा हो गया था। गम्भीर भी। इसीलिए उसने नज्म जारी रखी थी, “पर मुहब्बत वाली बात तो, मैं भूल ही गया। यह नहीं कि मुझे इश्क करने की हिम्मत नहीं, पर मुझे पता है कि इश्क को कुछ दिनों बाद टूटी हुई जूती की तरह घसीटना पड़ता है . ”

उसको लगा कि नज्म सुनती हुई लड़की का मुँह कुछ पीला हो गया था। उसे हसी-सी आई और उसने आगे नज्म पढ़ी, “पर यह भी क्या हुआ कि मैं सारी उम्र अकेला एक कमरे में बैठा हुआ बूढ़ा हो जाऊँ, और सारी दुनिया ब्याही जाए, और एक अकेला मैं ही कुआरा रह जाऊँ मेरा ख्याल है, दुनिया में कहीं एक मेरे योग्य औरत का अस्तित्व भी संभव है, इसी तरह जैसे मेरा अपना सम्भव हुआ है। मैं सिर्फ उसके साथ ब्याह करूंगा। वह उस ‘शी’ की तरह होगी जो दो हजार वरस तक अपने इजिप्शियन आशिक का इन्तजार करती रही...”

नज्म सुनती हुई लड़की ने हाथ आगे करके उससे किताब मांगी थी।

१५२ पाच बरस लम्बी सडक

उसने किताब दे दी थी ।

‘ग्रेगरी कारसो ने पता नहीं यह नम्रम किसके बारे में लिखी?’ लडकी ने कहा था ।

‘जरूर अपने बारे में लिखी होगी।’ उसने जवाब दिया था ।

‘यह भी तो हो सकता है, तुम्हारे बारे में लिखी हो लडकी अचानक’ हस पड़ा थी ।

उसे भी हसना पड़ा था । और उसने कहा था— ‘आई टेक इट ऐज ए कम्प्लामेंट ।’

कम्प्लामेंट ता है पर क्या फायदा ? लडकी ने एक आँख से आँख दिखाया था और पूछा था ‘इस नम्रम का पात्र बनना ? कि वह इजिप्शियन ?’

‘सिर्फ नम्रम का पात्र । उसने जवाब दिया था ।

‘पर वह इजिप्शियन क्या नहीं ?’ लडकी ने फिर सवाल किया था ।

वह हस दिया था और उसने कहा था ‘वह इजिप्शियन सिर्फ ऐसा काइ व्यक्ति बन सकता है जिसका काइ शी दा हजार बरस स डल जाग कर रही हो ।

लडकी चुप सी हो गई थी फिर उसने कहा, ‘आई एम दट गा ।’

इसपर वह हस दिया था । उसे लगा था कि ऐसी बातों का सिर्फ हसकर गुवाया जा सकता है । और उसने कहा था ‘इफ यू आर दट गी, आई गल टाइ माई वस्तु दु बी दैट इजिप्शियन ।’

लडकी वह किताब पढ़ना चाहती थी इसलिए उसने वह किताब दे

१ म इस अपनी तारीफ मानता है ।

२ म हा वह आरत है ।

३ अगर तुम वह औरत हो तो मैं भी वह इजिप्शियन बनने की पूरा कोशिश करूँगा ।

दी थी। पर वह अभी और भी कितावे देख रही थी, इसलिए उसने अपने कमरे की दूसरी चाबी उसे दे दी थी। कहा था—“मैं अगले हफ्ते एक महीने की छुट्टी पर जा रहा हूँ, तुम पीछे जब तुम्हारा जी चाहे कमरा खोल लेना, और कितावे देख लेना”

उस दिन जब वह लड़की चली गई थी तो वह कुछ पछता-मा गया था। उसको लगा था कि उसे अपने कमरे की चाबी उस लड़की को नहीं देनी चाहिए थी।

इस बात को कोई पांच वरस हो गए थे पर उसने आज तक उस लड़की से कमरे की चाबी वापस नहीं मांगी थी।

“आखिर अपने कमरे की एक चाबी मैंने उस लड़की को क्यों दे रखी है?” आज उसकी इस सोच ने उसे पता नहीं कैसा डक मारा था, उसने उठकर काफी का एक प्याला बनाना चाहा, पर उसमें पानी गरम करने और उसमें काफी घोलने की हिम्मत न हुई। उसके हाथ मूज रहे थे। उसने आधी-पौनी रात के अंधेरे में उठकर समुद्र के किनारे जाना चाहा, समुद्र का किनारा उसके कमरे से दूर नहीं था, पर उसके पैर नहीं हिले थे, उसके पैर सूज रहे थे। और हारकर उसने अपना ध्यान किसी और तरफ लगाना चाहा। वह भी नहीं हुआ, जैसे उसका ध्यान भी मूजता जा रहा था।

आज की सोच पता नहीं कैसा डक मार गई थी

‘सोच की मक्खी डक मारती है, पर शहद भी जोड़ती है’ उने त्याग आया, और वह उस लड़की से अपने परिचय के वरसों को ऐसे सोचने लगा, जैसे वह शहद की बूंदों और मक्खियों के डकों को अलग-अलग कर रहा हो।

मग्न पड़ते मुझे उस लडकी का मुह नहीं दिता था, उसकी आवाज नहीं आती थी। उस याद आया। उसका दफनर में प्यादातर एग्लोइडियन लडकिया थी, कुछ गुजराती भी था, पर पंजाबी कोई नहीं था। वह जब से यहाँ बम्बई आया था दूसरी जवान बालता बक गया था। दफनर में अग्रजा और हिंदी से माया मारना पड़ता था उसने गीक गीक में गुजराती भी सीख ली थी। पर कभी वह अपनी जवान में कुछ बहने का और मुनन का तरस जाता था। और फिर एक दिन उसने उस लडकी की आवाज सुनी

फिर शामद आवाज का मोह उसे हाँठों के माह तक ल गया था

उसने विस्तर में से उठकर कमरे की खिडकी खोली, और बाहर का अंधर का ऐसे देखने लगा जैसे बातें हुए बरसों का सडक बाहर के अंधर में स गुजर रही हो

सडक वही की बड़ी रहती है सिर्फ राही गुजर जात है 'उसे हसी मा आ गई और उस लगा राहा मा सिर्फ चलत हैं पहुँचत कहा नहीं—जब अपने कानों से लेकर किसीकी आवाज तक, फिर आवाज से लेकर होंठा तक फिर होंठा से लेकर कुछ और भगा तक, और फिर—उससे आगे वापस उनके अपने कान आ जाते हैं प्यासे और अंधेरे की तरफ देखन किसी आवाज का इन्तजार करत शायद धरती का तरह मन का सफर वाली सडक भी गोल होती है अपने से चलती है अपने तक पहुँचती है और फिर अपने से चलती है

उस अपने बचपन की एक बात याद आई—उसकी मा जब फूट के पाम बठकर राटी पकाती थी वह चिमटे से भाग की लपट को पकड़ने की कोशिश करता था। मा कहती थी—'चिमटे से जलता हुआ कोयला ता पकड़ा जा सकता है, पर भाग की लपट नहीं पकड़ी जा सकती।

पर वह कोयले को नहीं, आग की लपट को पकड़ना चाहता था००

उसको लगा—हर एक जिस्म बुझे हुए, या जलते हुए कोयले की तरह होता है। और उसने जब भी, और जहाँ भी किसी लड़की के जिस्म को छुआ था, एक बुझे हुए या जलते हुए कोयले को पकड़ा था—उसने आग की लपट को कभी पकड़कर नहीं देखा था००

पर वह कोयले को नहीं, आग की लपट को पकड़ना चाहता था, और यह बात उसने उस लड़की को भी बताई थी।

उसने वह 'शी' होने का दावा किया था, जो दो हजार बरस से अपने इजिप्शियन लवर की इन्तजार कर रही थी० इसीलिए एक बार उसे यह बात बतानी पड़ी थी० और उसे याद आया, उसने यह बात सिर्फ़ उस लड़की को नहीं बताई थी, एक बार उसने यह बात एक जर्मन लड़की को भी बताई थी—वह जब पिछले साल दफ़्तर की तरफ़ से एक माल के लिए जर्मनी गया था००

'उस रात मैं बहुत अकेला था०० एकाकीपन पत्थर जैसा ठोस नहीं था०० पानी की तरह पिघला हुआ था००'

'निर्फ़ पानी की तरह ही नहीं कि मैं टखनो तक, घुटनो तक भीगता उसके बीच में से गुज़र जाता० वह कुछ गाढ़ी, कुछ पतली एक दलदल की तरह मुझे अपने में खींच रहा था० डुबो रहा था०० उस लड़की के बदन को मैंने एक किनारे की तरह हाथ डाला था०० पर उसके भूरे बाल००' उसका जिस्म कांप-सा गया, और उसे याद आया, एक बार आख़े बन्द करके, और फिर खोलकर जब उसने उस लड़की के बालों की तरफ़ देखा था तो अचानक वह भूरे नहीं रहे थे, काले हो गए थे००

'यह क्या था?' वह कई दिन सोचता रहा था। वह भूरे बालों वाली लड़की, एक पल के लिए काले बालों वाली लड़की बयो बन गई

किसी भी लड़की से नहीं बट रहा था।

‘इट इज माई ओन सेल्फ’, हू एटड माई हाट लाइफ ए ब्लो
आफ नाइफ उसने लिडकी में से बाहर आसमान की तरफ देखा,
और ऐसी ऊँची आवाज़ में कहा, जैसे वह बात उसने बादनेयर की
सुनाई हो।

आसमान चुप था। सिर्फ कमरे का दरवाज़ा धीमे से बाला।

उसने दरवाज़ की तरफ देखा—वह लड़की चाबी में दरवाज़ा
खालकर धीरे से कमरे में आ गई थी। चाबी अभी उसके हाथ में
था।

“इट इट टू अर्ली टु कम ?” उसने पहले लड़की की तरफ देखा
फिर लिडकी से बाहर आसमान की तरफ। उजाला अभी मुश्किल से
पूँछा ही था।

“माई एम एफड ” लड़की की आवाज़ डोल भी गई और
मभला भी और उसने कहा ‘माई एम एफेड इट इज टू लेट ।’

उसने फिर कुछ नहीं कहा।

लड़की जहाँ खड़ी थी, दरवाज़े के पास, वहीं खड़ा रहा। गामद
उस लग रहा था कि वह जहाँ से चलकर इस कमरे तक आई थी, वह
राह चलना उसके बस में था पर अब अगली चुप की पार करता उसके
बस में नहीं था।

उसने हाथ में पकड़ हुए बाकी कप्याले का मेज़ पर रख दिया।
कुछ कहना उसे स्वाभाविक नहीं लग रहा था, पर वह चुप भी उसे
स्वाभाविक नहीं लग रही थी। इसलिए उसने कहा, ‘तुम बड़ो में

१ यह मेरा अपना आप है।

२ तुम क्या जल्दी नहीं आ गई ?

३ मेरा खाल है, बहुत दूर हो चुकी है।

तुम्हारे लिए कॉफी का एक प्याला बना दू ।”

लड़की ने इनकार में सिर हिलाया । उसके होंठ कुछ फड़के, “पहले तुम हमेशा मुझे कॉफी बनाने के लिए कहते थे, आज...” पर यह आवाज नहीं आई । होठ एक बार हिले और फिर भिच गए ।

चाबी अभी भी लड़की के हाथ में थी ।

“यह चाबी...” उसने एक बार लड़की की तरफ देखा, एक बार चाबी की तरफ, और फिर कुछ कहना चाहकर भी नहीं कहा ।

“चाबी को हाथ में पकड़कर नहीं आई, चाबी का हाथ पकड़कर आई हूँ” लड़की ने कहा । बड़ी सभली हुई आवाज में । शायद उसे अब लग रहा था कि अगर वह एक लम्बी राह चलकर इस कमरे तक आ सकती थी, तो अगली चुप को भी लाघ सकती थी ।

लड़की के और उसके बीच, आधे कमरे का फासला था । लड़की के मुह पर इस राह को भेलने की एक पीड़ा थी । पर यह राह उसे पार करनी थी—यह शायद पाच बरसों की सड़क के आगे अचानक टूट गई सड़क की राह थी

वह उसके पास आई । और बहुत नजदीक पहुँचकर उसने अपने सिर को उसकी छाती से ऐसे लगाया—जैसे यहाँ तक पहुँचते-पहुँचते वह बहुत थक गई थी ।

उसने पास रखे मेज की तरफ हाथ बढ़ाया और एक सिगरेट पकड़ा । सिगरेट को जलाने लगा था कि लड़की ने उसका हाथ पकड़ लिया ।

लड़की ने कहा कुछ नहीं, पर उसके होठों पर जो कुछ था उसे वह सुन सकता था ।

पहले वह जब भी सिगरेट जलाता था, वह उसका हाथ पकड़ लेती थी । कहा करती थी “निकोटीन पीनी है ? मेरे होठों में भी निकोटीन

है।

आज लड़की ने सिर्फ हाथ पकड़ा था, कहा कुछ नहीं था। पर जो कुछ उसने बट्टा नहीं था उस बट्टे मुन सकता था।

उसे हसी मी आ गई कहन लगा—“मेरा ख्याल है, मेरे लिए मिगरट की निकाटीन ही काफी है।

लड़की व हाठो म स नहीं छाती म से एक निश्वास निकला—
तुम मुझे कभी माफ नहीं करोगे ?

‘तुमने कोई कसूर किया है मैंने यह कभी नहीं साचा। उसने जवाब दिया।

पर तुम जाने से पहन जा थे, आकर वह नहीं रह। तुम्हारे पीछे जा कुछ हुआ था वह सिर्फ तुम्हें बताना था बता दिया। पर तुम उसा न्ति स वह नहा। लड़का का आवाज बहुत धकी हुई थी। एक गहरा सा मास लेकर कहने लगी तुम्हें याद है तुम कहा करत थे कि तुम जलत हुए कोयल जमा हा ।’

वह कहन लगा, ‘मैं यह भा कहता था कि मैं कोयल को नहा आग की तपट का पकड़ना चाहता हूँ। तपट कभी पकड़ी नहा जाती, इसलिए मैं कुछ भा नहीं चाहता। मैं कभी कुछ चाहा हो नहा, इसलिए आ और बाई तुम्हें अच्छा लगा

लड़की तडप-सी गई। कहन लगा— तुमने कभी कुछ चाहा नहा था, इसलिए मैं साचा जिसने चाहा वह ठीक था। पर सिर्फ किमा दूसरे का चाहना काफी हाता है।’

‘मैं तुम्हारे साथ लगती थी तो जलन कायल जती हा जाती था, पर उनके साथ, किमा और व साथ लगकर मुझे लगा मैं बुके हुए कोयल जती हो गई थी

वह धब भी चुप था। उसका जिम्मा भी अडाल था। पर उसकी

बाह काप-सी गई । बाह जैसे जस्म का हिस्सा नहीं थी । और वह लडकी की पीठ के गिर्द एक सहारे की तरह लिपट गई ।

“अब मैं सिर्फ जलता कोयला नहीं, आग की लपट हूँ”—लडकी ने सुलगकर और जलकर कहा ।

वह हंस दिया । कहने लगा —“पर लपट कभी पडकी नहीं जाती ।”

लडकी मे एक तपिश थी । कहने लगी —“वह वचपन था जब पकड़ी नहीं जाती थी । तुम लपट को चिमटे से पकड़ते थे । चिमटे से लपट नहीं पकड़ी जाती । लपट सिर्फ लपट से पकड़ी जाती है ”

वह पैरो के तलुओ तक कांप-सा गया । और उसे लगा —उसके मन में से एक लपट निकलकर, उस लडकी के मन मे से निकलती लपट के साथ मिलती, उसे अपने हाथो में पकड़ रही थी ..

लडकी के होठो मे पता नहीं निकोटीन था कि शहद । जो भी था, उसको लगा, उसे उसीकी जरूरत थी ।

और उन दोनो ने देखा, उनके पैरो के आगे जो सड़क टूट गई थी, अब वह टूटी हुई नहीं थी ।

